दो दोस्तों की बातें

लेखक एवं प्रकाशक

धर्मपाल कपूर

बी.ए. ऑनर्स, एम.ए.

कोठी नं. 1135, सैक्टर 11,
पंचकूला-134112 (हरियाणा)
फोन : 0172-2567845
मोबाइल : 9356301618

संस्करण : 2021
प्रतियाँ : 1000

धर्मपाल कपूर
बी.ए. ऑनर्स, एम.ए.
कोठी नं. 1135, सैक्टर 11, पंचकूला
फोन : 0172-2567845
मोबाइल : 9356301618

टंकण एवं साजसज्जा : **अभिनव इंटरप्राइजिज, मो. 94683 40497, 81684 90221**
मुद्रक :

दो शब्द

रामायण और गीता की भाँति ''दो दोस्तों की बातें'' नामक पुस्तक भी एक संवाद पुस्तक है जिसमें दो दोस्तों राम एवं श्याम द्वारा विविध विषयों जैसे प्रभु है या नहीं? क्या प्रभु सृष्टिकर्त्ता है? प्रभु भक्ति क्यों करें? प्रभु साकार क्यों नहीं? प्रभु का ध्यान कैसे करे? प्रभु न्यायकारी या दयालु है। क्या सारी सृष्टि का निर्माण प्रभु ने किया है आदि विषयों पर प्रकाश डाला गया है। वस्तुतः प्रभु के विषय में विभिन्न विद्वानों के विभिन्न विचार हैं। जैसे वैष्णव वैकुण्ठ में शैव कैलाश में प्रभु का निवास मानते हैं। बाइबल में लिखा है कि परमात्मा चौथे आकाश में रहता है। क़ुरान में लिखा है ख़ुदा सातवें आकाश में रहते हैं। परन्तु वेदानुसार जोकि संसार के पुस्तकालय में प्राचीनतम एवं श्रेष्ठतम ग्रंथ माने जाते हैं परमात्मा सर्वव्यापक है।

अतः मैंने वैदिक सिद्धान्तों की दृष्टि में रखकर प्रस्तुत पुस्तक लिखी है जिसमें वेदानुकूल सत्य सिद्धान्तों का मंडन एवं पाखण्डों का खण्डन किया गया है। जैसे कि महर्षि दयानन्द जी अपनी अमरकृति सत्यार्थप्रकाश में करते हैं। अतः इसमें सार्वभौमिक एवं सर्वकालीन तथ्यों द्वारा गागर में सागर को भर दिया गया है। इसलिये यदि मैं इसे लघु सत्यार्थप्रकाश के नाम से पुकारूँ तो इसमें तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं होगी।

वस्तुतः मैंने प्रस्तुत पुस्तक विशेषतः उन व्यक्तियों के लिए लिखी है जोकि अंधविश्वास एवं पाखण्डों की दलदल में फंसे हैं ताकि वे इस का अध्ययन करके सत्य को जान सकें। यह पुस्तक उनके लिए अत्यंत शिक्षाप्रद होगी और इसके अध्ययन से उनके जीवन का कायाकल्प हो जायेगा ऐसा मेरा विश्वास है।

प्रस्तुत पुस्तक के लिखने में मुझे सर्वश्री जय किशन धीमान जी, रोशन लाल अग्रवाल जी, बलदेवराज जी, हरिकृष्ण शर्मा जी, मोहन लाल गुप्ता जी आदि ने सहयोग प्रदान किया है। इसके अतिरिक्त मैं उन सभी लेखकों एवं कृतिकर्त्ताओं का भी अत्यंत धन्यवादी हूँ जिनकी कृतियों से मैंने संदर्भ उद्धृत किये हैं। जैसे कि संस्कृत में एक उक्ति है–

शतं वद एकं मा लिख

सौ बार कहो परन्तु एक बार भी मत लिखो क्योंकि लेखन में यदि कोई त्रुटि रह जाती है तो वह तुरन्त पकड़ी जाती है और लेखक की पोल खुल जाती है। मैंने प्रस्तुत पुस्तक के लिखने में पूर्ण सावधानी बरती है। परन्तु मैं भी संसार के प्रत्येक व्यक्ति की तरह अल्पज्ञ और अपूर्ण हूँ। अतः यदि कोई त्रुटि रह गई हो तो पाठकों से क्षमा चाहूँगा।

धर्म पाल कपूर

तिथि : 27.10.2021

धर्मपाल कपूर
बी.ए. ऑनर्स, एम.ए.
कोठी नं. 1135, सैक्टर 11, पंचकूला
फोन : 0172-2567845
मोबाइल : 9356301618

निवेदन

श्री धर्मपाल कपूर जी ने साहित्य के क्षेत्र में अनेक ग्रन्थों की रचना की। इनमें से कुछ धार्मिक, कुछ साहित्यिक तो कुछ ऐतिहासिक हैं। प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने जहाँ धर्म के मुख्य बिन्दुओं पर प्रकाश डाला है वही भारत के इतिहास पर भी प्रकाश डाला है। विश्वगुरु के पद पर आसीन भारत आखिर परतन्त्रता की बेड़ियों में कैसे बंध गया जब कि यहाँ के राजा महाराजा तथा सैनिक विशेष परिश्रमी एवं बलवान् थे। पुरुष के साथ कंधे से कंधे मिलाकर चलने वाली देवियों का देश भारत आखिर इस स्थिति पर पहुँचा कैसे? लेखक ने इन विषयों का बड़ी ही बारीकी से अध्ययन किया है। सातवीं शताब्दी में मुहम्मद बिन कासिम ने जब पहला आक्रमण सिन्ध प्रदेश पर किया तो अपनों के ही विश्वासघात के कारण महाराजा दाहिर को पराजय का सामना करना पड़ा और तभी से होने लगा इस स्वर्णमयी देव भूमि का पतन।

लेखक ने संवाद शैली के माध्यम से वेदों के विषयों पर गहन प्रकाश डाला है। जो प्रभु की सत्ता को स्वीकार नहीं करते उन्हें भी बड़े ही तर्क पूर्ण ढंग से इसे समझाने का प्रयास किया है। तर्कों के आधार पर ही उन्होंने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि ईश्वर सच्चिदानंदस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार और सर्वज्ञ है।

लेखक ने तीन पदार्थों को नित्य माना है वे हैं—परमात्मा, आत्मा और प्रकृति। परमात्मा ने प्रकृति से जगत् को उत्पन्न किया है इसलिए परमात्मा निमित्त कारण है और प्रकृति उपादान कारण है। इसी कारण वेदों में निहित त्रैतवाद के इस पुस्तक में दर्शन होते हैं। ऋग्वेद में लिखा है—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्यो अभिचाकशीति।। 1.164.20

प्रकृति रूपी वृक्ष पर दो सुन्दर पक्षी एक मित्र की भाँति, बड़े छोटे की भाँति बैठे हैं। उन में से एक वृक्ष के फलों को काट कर खा रहा है और गिरा

रहा है । दूसरा पक्षी न काट रहा है, न खा रहा है और न ही गिरा रहा है अर्थात् साक्षी मात्र है । साक्षी मात्र पक्षी परमात्मा, फलों को काटने खाने वाला पक्षी जीवात्मा तथा वृक्ष प्रकृति है ।

प्रभु ही इस संसार में सभी सुखों का भण्डार है । बस इसे प्रभु की स्तुति, प्रार्थना और उपासना से ही प्राप्त किया जा सकता है । स्तुति मंत्रों से व्यक्ति प्रभु के गुणों को अपने अन्तःकरण में उतारेगा जिससे उसके प्रति जीव के हृदय में प्रेम उत्पन्न होगा । प्रार्थना के मंत्रों से जीव प्रभु के गुणों को अपने आचरण में उतारेगा जिससे उसके मन में प्रभु को पाने की लालसा प्रबल होती चली जाएगी । तब उपासना से वह स्वयं को प्रभु की गोदी में बैठा हुआ पायेगा । प्रभु को पाने का यही एकमात्र मार्ग है ।

यही नहीं लेखक ने समाज में फैली हुई भ्राँतियों को संवादशैली के माध्यम से दूर करने का प्रयास किया है । अभिवादन के मूल शब्द 'नमस्ते' पर भी विस्तार से प्रकाश डाला है । मनुष्य को मांस खाना चाहिये अथवा नहीं इस पर भी लेखक ने यह सिद्ध कर दिया है कि मानव शरीर मांस खाने के लिए बना ही नहीं है । वह तो पूर्ण रूपेण शाकाहारी है ।

अतः संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि यह पुस्तक बहुत ही ज्ञानवर्धक है जो पाठकों के ज्ञान में वृद्धि करेगी ऐसा मेरा विश्वास है । मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि वे श्री धर्मपाल कपूर जी को लम्बी और स्वास्थ्यवर्धक आयु प्रदान करें जिससे वे निरन्तर समाज की सेवा करते रहें ।

जय किशन एम.ए.
म. नं. 76, गाँव. व डा. कोट,
जि. पंचकूला (हरियाणा)
मो. : 8168490221
9468340497

विशेष सूचना

1. स्वाध्याय, मनन और आत्मसात् ।
2. पाठकगण पुस्तक पढ़ने के पश्चात् किसी भी स्वाध्यायशील मित्र को इसे देने की कृपा करें ।
3. कोई भी जिज्ञासु अपनी इच्छानुसार इसकी प्रतियाँ फोटोस्टेट करवा कर स्वाध्यायशील मित्रों में प्रचार-प्रसार के लिये बाँट सकता है ।
4. पुस्तक केवल प्रचारार्थ लिखी गई है और सदुपयोग ही इसका मूल्य है ।
5. सर्वाधिकार लेखकाधीन ।

धर्मपाल कपूर
बी.ए. ऑनर्स, एम.ए.
कोठी नं. 1135, सैक्टर 11,
पंचकूला-134112 (हरियाणा)
फोन : 0172-2567845
मो० : 9356301618

विषयसूची

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ
1.	प्रभु है या नहीं?	1
2.	क्या प्रभु सृष्टिकर्ता है?	10
3.	प्रभुभक्ति कैसे करें?	17
4.	प्रभु साकार क्यों नहीं?	25
5.	प्रभु का ध्यान कैसे करें?	33
6.	प्रभु न्यायकारी है या दयालु?	47
7.	श्राद्ध करना चाहिये या नहीं?	53
8.	नमस्ते कहाँ से चली?	60
9.	माँस खाना चाहिये या नहीं?	65
10.	क्या सारी सृष्टि का निर्माण प्रभु ने किया है?	71

1. प्रभु है या नहीं?

राम – मित्र तुम कहा करते हो कि नित्य प्रभु प्रार्थना किया करो, मैं तुम से आज यह पूछता हूँ कि बताओ प्रभु है कहाँ? जिस की प्रार्थना किया करूँ?

श्याम – प्रभु सर्वत्र है, कोई स्थान उससे खाली नहीं है।

राम – यह एक ही कहीं, जब प्रभ सब जगह है तो और चीजें किस जगह हैं? जगह तो सभी प्रभु ने घेर ली, कोई स्थान उससे खाली न रहा, तो और चीजें क्या बिना स्थान के ही रहती हैं?

श्याम – नहीं मित्र, यह बात नहीं कोई स्थान प्रभु से खाली नहीं है, इस से मेरा भाव है कि उसकी सत्ता सब स्थानों में है। बोल चाल की भाषा में इसी तरह कहा जाता है। प्रभु की सत्ता जगह को नहीं घेरती। जगह घेरने वाले पदार्थ प्राकृतिक होते हैं। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और उन के परमाणु ये सब के सब जगह को घेरते हैं। प्रभु तो इन समस्त पदार्थों में व्यापक है। इसलिए कहा जाता है कि प्रभु सब जगह है।

राम – अच्छा, प्रभु सब जगह है तो दिखाई क्यों नहीं देता? जब दिखाई नहीं देता तो उस के होने का प्रमाण ही क्या है?

श्याम – तो क्या, जो चीज दिखाई नहीं देती, वह होती ही नहीं क्या? संसार में बहुत से ऐसे पदार्थ हैं, जो होते हैं, परन्तु नहीं दिखाई देते। जैसे सर्दी-गर्मी, सुख-दुःख, समय, दिशा, भूख, प्यास, दर्द आदि। किसी चीज के दिखाई न देने के बहुत से कारण हो सकते हैं, और होते हैं। संसार में बहुत सी चीजें ऐसी हैं जो बहुत दूर होने के कारण दिखाई नहीं देती–जैसे योरूप, अमेरिका तथा बहुत दूर उड़ती हुई पतंग या पक्षी। बहुत सी चीजें ऐसी हैं, जो अत्यन्त पास होने के कारण नहीं दिखाई देतीं–जैसे आँख और उसमें लगा हुआ काजल। बहुत सी चीज़ ऐसी है जो अत्यन्त सूक्ष्म होने के कारण दिखाई नहीं देती है जैसे परमाणु। इसी भाँति अनेक प्रकार के कीटाणु हैं जो खुर्दबीन द्वारा ही देखे जाते हैं। बहुत सी चीजें ऐसी हैं, जो पर्दे के कारण दिखाई नहीं देतीं जैसे काई के कारण जल। मैल के पर्दे के कारण शीशा। दीवार के कारण

दीवार के पीछे बैठा हुआ मनुष्य । बहुत सी चीजें किसी एक गुण में समान होने से नहीं दिखाई देती, दूध में पानी, क्योंकि दोनों बहने वाले पदार्थ हैं । बहुत सी चीजें ऐसी होती हैं, जो आँख में दोष होने के कारण नहीं दिखाई देती—जैसे पीलिया हो जाने पर सफेदी । इसलिए यह कहना कि जो दिखाई नहीं देता वह होता ही नहीं है, पूर्णतः नहीं झूठ है ।

राम – मैं बिना देखे तो विश्वास नहीं करता हूँ ।

श्याम – वह तुम्हारा कोरा हठ है । मैं बता चुका हूँ कि बहुत सी चीजें जो आँख से नहीं दिखाई देती वे होती हैं और उन पर विश्वास करना ही पड़ता है । अच्छा, बताओ मैं जो बोल रहा हूँ उसे तुम सुन रहे हो या नहीं ।

राम – हाँ सुन रहा हूँ ।

श्याम – किससे सुन रहे हो ?

राम – कानों से ?

श्याम – जो मैं शब्द बोल रहा हूँ, वह है भी या नहीं ?

राम – है क्यों नहीं ?

श्याम – फिर उन्हें आँखों से क्यों नहीं देख रहे हो ? अच्छा और लो, मेरे हाथ में यह फूल है, बताओ किसका है ?

राम – गेंदा का ।

श्याम – इसमें सुगन्ध है या नहीं ?

राम – है ।

श्याम – किससे पता चलाया ?

राम – नाक से ।

श्याम – एक बात और बताओ, रात जो तुमने दूध पिया था उसमें चीनी थी वा नहीं ?

राम – थी ।

श्याम – उसका अनुभव किससे हुआ ?

राम – जुबान से ।

श्याम – अब मैं पूछता हूँ, शब्दों का ज्ञान कानों से, सुगन्धि का ज्ञान नाम से, और चीनी का ज्ञान जुबान से ही क्यों हुआ? आँखों ने शब्दों का, कानों ने सुगन्धि का और नाक से मिठास का ज्ञान क्यों नहीं प्राप्त किया? गन्ध और मिठास के होते हुए भी आँखों ने क्यों नहीं प्राप्त किया? गन्ध और मिठास के होते हुए भी आँखों ने उन्हें देखा क्यों नहीं?

राम – जिस इन्द्रिय का जो विषय था, उसने उसका ज्ञान प्राप्त किया, प्रभु तो किसी इन्द्रिय से नहीं जाना जाता उसे कैसे मान लें कि वह है?

श्याम – तुम्हारा पक्ष तो यह था कि प्रभु दिखाई नहीं देता, इसलिए वह नहीं है, जरा देर में ही बात बदल दी। अच्छा चलो, यह बात तो तुम ने मान ली कि जो चीजें आँख से दिखाई नहीं देती वह भी होती हैं। यह और बात है कि उस का ज्ञान आँख के अतिरिक्त दूसरी इन्द्रियाँ से हो। अब तुम इस बात पर आये हो कि प्रभु किसी इन्द्रिय से नहीं जाना जाता उसे कैसे मान लें कि वह है अच्छा बताओ, इन्द्रियों से न जानने के कारण प्रभु को नहीं मानते हो, तो इन इन्द्रियों को ही कैसे जानते हो? यदि कहो कि इन्द्रियों को इन्द्रियों से जानता हूँ, तो यह आत्माश्रय दोष है, क्योंकि कोई भी द्रष्टा स्वयं ही दृश्य नहीं हो सकता। इद्रियाँ इन्द्रियों को जान भी कैसे सकती हैं, जब कि उनके भिन्न-भिन्न विषय हैं। आँख का रूप, कानों का शब्द, नासिका का गन्ध, जिह्वा का रस और त्वचा का स्पर्श विषय है। नाक आँख को नहीं जान सकती, जिह्वा कानों को नहीं जान सकती।

राम – वाह! जान क्यों नहीं सकती। जब मैं दर्पण हाथ में लेता हूँ तो आँख, मुख, नाक, कान, जिह्वा आदि सब इन्द्रियाँ दिखाई देती हैं। आँख तो वह इन्द्रिय है, जो सारी इन्द्रियों का ज्ञान करा देती है।

श्याम – फिर यह तुम्हारी भूल है। आँख से जो भी कुछ देखते हो वह रूप ही देखते हो, अन्य इन्द्रियाँ तथा उनके विषयों को नहीं। दर्पण के द्वारा इन्द्रियाँ कहाँ दिखाई देती हैं। इन्द्रियों के गोलक अर्थात स्थान दिखाई देते हैं। जो रूप वाले हैं। इन्दियाँ उन स्थानों में शक्तिरूप में विद्यमान हैं। आँख हमारी इन्द्रियों का ज्ञान तो क्या करायेगी, आँख तो स्वयं अपने को भी नहीं देखती? यदि तुम्हारी यही धारणा है कि दर्पण से आँख दिखाई देती है, तो लो,

मैं तुमसे एक बात पूछता हूँ? बताओ यह मेरे हाथ में क्या है?

राम – दर्पण है।

श्याम – दर्पण है, यह किससे देखा?

राम – आँखों से।

श्याम – अच्छा आँखों से दर्पण को देखा है, तो दर्पण देखने से पहले आँखों का ज्ञान था, इस का मतलब यह हुआ कि यदि आँखें न होती तो शीशे को नहीं देख सकती थीं। अब बोलो आँखों से दर्पण का ज्ञान होता है या दर्पण से आँखों का ज्ञान होता है? यदि दर्पण से आँखों का ज्ञान होता तो आँखों के फूट जाने पर दर्पण फूटी आँखों का तो ज्ञान क्या, स्वयं अपना भी ज्ञान नहीं कर सकता और जरा गहराई से सोचोगे तो पता चलेगा कि आँख भी जो कुछ देखती है साधनों की सहायता से देखती है, स्वतन्त्र रूप से नहीं। यह बात तो ठीक है कि रूप का ज्ञान बिना आँखों के नहीं हो सकता, लेकिन रूप का ज्ञान भी आँखें अपने आप ही नहीं कर लेती।

राम – आँखों को किन साधनों की आवश्यकता है? आँखें तो स्वतन्त्र रूप से ही देखती हैं। आँखों का तो विषय ही देखना है? जरा बताओ, कि आँखें स्वतन्त्र रूप से क्यों नही देखती?

श्याम – अच्छा सुनो, मैं इस समय सारी चीजों को देख रहा हूँ। लेकिन इस समय घोर अँधेरा हो जाये तो मैं ये सारी चीज देख सकूँगा या नहीं?

राम –नहीं।

श्याम – तो पता चला कि देखने के लिए न केवल आँखें ही चाहिए अपितु प्रकाश भी। प्रकाश के न होने पर आँखों के होते हुए भी मैं अन्धा हूँ। अच्छा, प्रकाश और आँख दोनों ही चीजें मौजूद हो तो भी मैं नहीं देख सकता, अगर देखने की चीज़ एक निश्चित स्थान पर न हो। देखो! यह पुस्तक है, यदि में इसके अक्षर एक किलोमीटर की दूरी से देखना चाहूँ तो नहीं देख सकता। यदि आँखों पर ही पुस्तक को लगाऊँ तो भी इसके अक्षर नहीं देख सकता। अक्षरों को देखने के लिए एक निश्चित स्थान चाहिए, तब उन्हें देखा

और पढ़ा जा सकता है और देखो, आँख, प्रकाश और निश्चित स्थान भी हो, तो भी नहीं देख सकता, यदि मन का सम्बन्ध आँखों से न हो। मन यदि किसी कार्य में लगा हो, आँख के सामने से चीज निकल जाएगी, परन्तु आँख उसे देख न सकेगी बहुधा ऐसा होता है कि सामने से कोई चीज निकल गई, किसी ने पूछा—आपने अमुक चीज को देखा? तो उत्तर मिला है, अजी मैंने ख़्याल नहीं किया। अब तुम समझ गये होंगे कि देखने के लिए कितने साधन चाहियें।

राम – तुम्हारे इन सारी बातों के कहने का अर्थ क्या हुआ?

श्याम – अब भी नहीं समझे। अर्थ यह हुआ कि यदि प्रभु को इन्द्रियों से नहीं जान सकते, तो इन्द्रियों को भी इन्द्रियों से नहीं जान सकते। फिर भी इन्द्रियों को मानना पड़ता है। फिर प्रभु के मानने में ही शंका क्यों है?

राम – इन्द्रियाँ कैसे जानी जाती हैं?

श्याम – इन्द्रियों को जीवात्मा अनुभव द्वारा जानता है। क्योंकि जब उनसे शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध का ज्ञान प्राप्त करता है, तो वह जानता है कि यह मेरे पास साधन हैं, जिनसे मैं काम ले रहा हूँ।

राम – और प्रभु कैसे जाना जाता है?

श्याम – प्रभु भी अनुभव से जाना जाता है।

राम – इसका अनुभव किसको होता है?

श्याम – आत्मा को ही प्रभु का अनुभव होता है।

राम– यह अनुभव कब होता है?

श्याम – जब मन के तीन प्रकार के दोष दूर हो जाते हैं।

राम – ये तीन प्रकार के दोष कौन से हैं?

श्याम – मल, विक्षेप और आवरण ये तीन दोष हैं।

राम – इनकी परिभाषा क्या है?

श्याम – मन में दूसरों को हानि पहुँचाने का विचार है तथा पापों के जो आत्मा पर संस्कार हैं उसका नाम 'मल' है, लगातार विषयों का चिन्तन करने

अथवा मन के स्थिर न रहने का नाम विक्षेप है । संसार के नाशवान् पदार्थों के अभिमान का मन पर पर्दा पड़े रहने का नाम आवरण है ।

राम – इन तीन प्रकार के दोषों को किस तरह दूर किया जाता है ।

श्याम – इनके दूर करने के तीन साधन हैं ।

राम – वह कौन से हैं ?

श्याम – ज्ञान, कर्म और उपासना ।

राम – ज्ञान, कर्म और उपासना से क्या अर्थ है ?

श्याम – जो पदार्थ जैसा हो, उसको वैसा ही समझना । जड़ को जड़, चेतन को चतन, नित्य को नित्य और अनित्य को अनित्य जानना 'ज्ञान' और शरीर, समाज तथा आत्मा की उन्नति के लिए उन पदार्थों की प्राप्ति के लिए यत्न करना 'कर्म' और पदार्थों के पास जाकर उनके गुणों से अपने दोषों को सुधारने का नाम 'उपासना' है । कल्पना करो, एक व्यक्ति शीत का सताया हुआ है । अगर शीत दूर करने के लिए जल के समीप जाता है, तो यह उस का अज्ञान है, ज्ञान नहीं । शीत तो तभी दूर हो सकता है, जब उस अग्नि का ज्ञान हो, फिर शीत शान्त करने के लिए अग्नि की प्राप्ति के लिए कर्म करे और फिर अग्नि के समीप जाकर शीत दोष को अग्नि के गुण गर्मी से दूर करे । तात्पर्य यह है, ज्ञान से मल, कर्म से विक्षेप और उपासना से आवरण दूर होता है जब कहीं प्रभु का अनुभव होता है ।

राम – इसे थोड़ा स्पष्ट और करो । ज्ञान से मल, कर्म, विक्षेप और उपासना से आवरण दोष दूर कैसे होते हैं ?

श्याम – ज्ञान के द्वारा समझ लेना कि संसार के सब प्राणी और सब पदार्थ नाशवान् हैं इसलिए दूसरों के अधिकारों को छीन का भाव न रखना ही 'मल' दोष दूर होता है । किसी के मन 'विक्षेप' अर्थात् चंचलता तब उत्पन्न होती है, जब वह संसार के पदार्थों को जीवन का उद्देश्य समझ कर उनका प्रयोग करता है । संसार के पदार्थ वास्तव में साधन तो हैं परन्तु साध्य नहीं है । यह सिद्धान्त समझकर जो कर्म किया जाता है वह व्यक्ति को जल में कमल की भाँति संसार की ममता से लिप्त नहीं होने देता । निष्काम कर्म से

विक्षेप दोष दूर होता है । व्यक्ति के मन पर अभिमान का जो एक पर्दा होता है, यह प्रदत्त वस्तुओं को अपनी समझता है । मेरा धन, मेरी स्त्री, मेरा बल, मेरा राज्य आदि । अभिमान में वह दूसरों को सताता है । वह समझता है मुझसे बड़ा कोई नहीं । परन्तु जब यह ज्ञानपूर्वक कर्म करता है, मन इन्द्रियों के बाहर के विषयों से हटाकर शक्तियों को हृदय में एकाग्र करता है और समझता है कि मेरे निकट प्रभु हैं और मैं प्रभु के निकट हूँ । बस इसी उपासना से अभिमान आवरण दोष दूर हो जाता है । इस प्रकार तीनों दोषों को तीनों साधनों से दूर करने का निरन्तर अभ्यास प्रभु का अनुभव करा देता है । ऐसा करने से भी साधक साधना कर सकता है ।

राम – मित्र तुम्हारे समझाने का ढंग तो अच्छा है । तुम तर्क में बड़े चतुर हो । परन्तु मैं यह पूछता हूँ कि संसार को प्रभु की आवश्यकता ही क्या है ?

श्याम – संसार को प्रभु की आवश्यकता क्या है यह एक ही कही । जब प्रभु ही न होगा तो संसार बनेगा कैसे ? यह पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्र, तारे, समुद्र, नदियाँ, झीलें, झरने, स्रोत, सरोवर, पहाड़, वन, उपवन, लता, तरु, फूल, मेवे, दूध, मधु अनेक प्रकार के दृश्य, अनेक प्रकार की ऋतुएं, मनुष्य , पशु, पक्षी, जलचन, थलचर, नभचर, अण्डज, उद्भिज, जरायुज आदि अनेक प्रकार की योनियाँ तथा समस्त पदार्थों को बिना प्रभु के और कौन बना सकता है ।

राम – इन पदार्थों के बनाने के लिए प्रभु की क्या आवश्यकता है ? ये तो स्वयं ही बने हुए हैं और सदा से हैं ।

श्याम–संसार का कोई भी पदार्थ बिना बनाने वाले के नहीं बनता । यदि स्वयं ही बन जाता तो बिना रसोइये के रोटी, बिना कुम्हार के घड़ा, बिना सुनार के जेवर, बिना हलवाई के मिठाई, बिना दर्जी के कपड़े भी स्वयं ही बन गये होते । दूसरे कोई भी बनी हुई चीज सदा से नहीं होती । प्रत्येक चीज में उत्पन्न होना, बढ़ना, बढ़कर रुक जाना, परिवर्तन होना, घटना और अन्त में नष्ट हो जाना यह विकार मौजूद है । बड़े से बड़ा पहाड़, बड़े से बड़ा वृक्ष, बड़े से बड़ा पशु तथा संसार की बड़ी से बड़ी और छोटी से छोटी प्रत्येक वस्तु

उत्पन्न हुई है और अन्त में नष्ट हो जायेगी ।

राम – परन्तु मुझे तो प्रभु कहीं कोई चीज़ बनाते हुए नज़र नहीं आता । सब चीजें अपने आप ही उत्पन्न हो रही है और नष्ट हो रही हैं । ऐसा सिलसिला सदा से रहा है । पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, और उनके परमाणु जंगल में मौजूद हैं, वे ही परस्पर में मिलकर पदार्थों की उत्पत्ति और अलग होकर पदार्थों का विनाश कर रहे हैं । उसमें प्रभु का क्या काम ?

श्याम – यह विचार भ्रमपूर्ण है । पृथ्वी आदि तत्त्व एवं परमाणु जड़ हैं । वे न बिना मिलाये मिल सकते हैं, न अलग हो सकते हैं । मिलना और बिछुड़ना दो विपरीत गुण हैं, जो किसी भी जड़ पदार्थ में एक जगह नहीं रह सकते । किसी भी जड़ पदार्थ में कई गुण तो हो सकते हैं परन्तु दो विपरीत गुण नहीं हो सकते । किसी भी पदार्थ का अगर मिलने का स्वभाव है, तो वह मिलता ही चला जाएगा और अलग-अलग रहने का स्वभाव है तो वह कभी मिलेगा ही नहीं ।

यदि यह कहो कि प्रकृति के तत्त्वों में कुछ का स्वभाव मिलना और कुछ का स्वभाव अलग होना है, तो जिन तत्त्वों की प्रबलता होगी उन्हीं के अनुकूल काम होगा । अर्थात् यदि मिलने वाले तत्त्वों की प्रबलता है तो वे जगत् को कभी भी बिगड़ने न देंगे और यदि बिगड़ने वाले तत्त्वों की प्रबलता है तो व जगत् के कभी बनने न देंगे और यदि बराबर रहने का स्वभाव है, तो जहाँ दो तत्त्व मिलेंगे, वहाँ दो ही अलग होंगे, तो भी कोई चीज़ नहीं बन सकती । परन्तु संसार में प्रत्येक चीज बनती, बिगड़ती और स्थिर रहती हुई देखी जाती है । प्रकृति के तत्त्वों में तुम चाहे कितने ही गुणों की कल्पना क्यों न कर लो, नियमपूर्वक उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय को संभावना बिना प्रभु के उनमें हो ही नहीं सकते । जड़ और चेतन में यही अन्तर है कि प्रथम तो जड़ वस्तु काम ही नहीं कर सकती, दूसरे यदि चेतन के सहारे कुछ कार्य करेगी भी तो एक ही प्रकार का कार्य करती रहेगी । चेतन अर्थात् ज्ञानवान् सत्ता में यह शक्ति है, कि वह किसी कार्य को करे या न करे या उल्टा करे । यह गुण चेतन सत्ता में स्वभाव से ही विद्यमान है ।

राम – जो किसी पदार्थ को बनाने वाला होता है वह प्रत्यक्ष दिखाई

देता है, जेवर को बनाने वाला सुनार, मिठाई को बनाने वाला हलवाई, घड़े को बनाने वाला कुम्हार, घोंसले को बनाने वाला पक्षी ये सब के सब दिखाई देते हैं। अगर प्रभु संसार को बनाने वाला होता तो वह भी दिखाई देता है।

श्याम – विश्वास रखो! कर्ता कभी दिखाई नहीं देता। तुम्हारा यह कहना कि सुनार, हलवाई, कुम्हार आदि दिखाई देते हैं सर्वथा झूठ है। तुम कहोगे कैसे? अच्छा सुनो। कुम्हार, सुनार, हलवाई आदि जितने कर्ता हैं, वे दो चीजों के बने हुए हैं, एक भौतिक शरीर, दूसरा अमर जीवात्म। शरीर आत्मा का क्या है? कार्य करने का एक साधन है। जब आत्मा इस शरीर रूप साधन को काम में लाता है, तभी कुछ बना पाता है। अगर इस साधन को काम में न लावें तो चीज नहीं बन सकती। अब सोचो–सुनार, कुम्हार, हलवाई आदि का शरीर तो नज़र आता है जो काम करने का एक यन्त्र है और पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश आदि पंच तत्त्वों का बना हुआ है। लेकिन प्रभु जो शरीर से काम लेता है अर्थात् कर्त्ता है वह नज़र नहीं आता। आत्मा बिना शरीर के कोई चीज़ बना नहीं सकती उसकी शक्तियाँ सीमित हैं इसलिए प्रभु उसे शरीर देता है जोकि दिखाई देता है। प्रभु अनन्त और सर्वव्यापक है। यह बिना शरीर के ही अपने सारे कार्य करता है दिखाई दोनों कर्त्ता नहीं देते, न कर्त्ता रूपी अल्पकर्त्ता, न परमात्मा रूपी सर्वशक्तिमान सर्वज्ञ कर्त्ता।

श्याम – अब विचार विनिमय का समय पूर्ण हो चुका है, फिर इस प्रश्न का उत्तर दिया जाएगा।

राम – अच्छा फिर सही।

2. क्या प्रभु सृष्टिकर्त्ता है?

राम – लो मित्र कल के प्रश्न का उत्तर दो ।

श्याम – तुम्हारा कल का प्रश्न था कि जब प्रभु का शरीर नहीं, तो संसार को कैसे बना सकता है, क्योंकि बिना शरीर के न तो क्रिया हो सकती है और न कार्य हो सकता है? मित्र! यह भी तुम्हारी भूल है । चेतन पदार्थ जहाँ पर भी उपस्थित होगा, वहाँ वह क्रिया कर सकेगा । जहाँ पर उपस्थित नहीं होगा वहाँ पर शरीर आदि साधनों की आवश्यकता पड़ेगी । देखो! मैंने यह मोबाइल फोन उठाया । बताओ किससे उठाया ।

राम – हाथ से ।

श्याम – यदि हाथ न होता तो मैं पुस्तक को उठा सकता था या नहीं?

राम – नहीं ।

श्याम – अच्छा, हाथ ने तो मोबाइल के उठाया, अब बताओ हाथ को किसने उठाया?

राम – हाथ को अपनी शक्ति ने उठाया ।

श्याम – लो, मैं सारे शरीर को हिला रहा हूँ, बताओ किससे हिला रहा है?

राम – अपनी शक्ति से ।

श्याम – तुम तो कहते थे कि बिना शरीर के कोई क्रिया नहीं हो सकती । फिर बिना शरीर के इस शरीर को क्रिया कैसे मिल गई? पता चला चेतन और उसकी शक्ति जहाँ-जहाँ मौजूद हैं वहाँ उसे शरीर की आवश्यकता ही नहीं । आत्मा शरीर के भीतर होने के कारण सारे शरीर को क्रिया देती है, और शरीर से बाहर के पदार्थों को शरीर से क्रिया देता है क्योंकि वहाँ वह उपस्थित नहीं है । प्रभु बाहर भीतर सर्वत्र विद्यमान है, इसलिए उसे शरीर की आवश्यकता नहीं पड़ती है वह सारे संसार में व्यापक होने के कारण सारे संसार को क्रिया देता है ।

राम – मैं देखता हूँ, शक्ल वाला ही शक्ल वाली चीज़ को बनाता है,

जैसे हलवाई, सुनार आदि । निराकार प्रभु जगत् को कैसे बना सकता है ?

श्याम – जितने शक्ल वाले कर्त्ता हैं, वे अपने से बाहर की चीजों को बनाते हैं, अपने भीतर की चीजों को नहीं । बाहर की चीज के लिए हाथ, पैर की आवश्यकता है, भीतर के लिए नहीं । प्रभु से कोई चीज बाहर नहीं इसलिए उसे शरीर की आवश्यकता नहीं । हलवाई अपने से बाहर की चीजें बनाता है, यदि उन्हें अपने शरीर के भीतर ही बनाने लगे तो उसे खायेगा कौन ? फिर उसे हाथ पैरों की आवश्यकता ही क्या है ? शरीर के भीतर रस, रक्त, माँस, हड्डी आदि पदार्थ बिना हाथ पैरों के ही बन रहे हैं । एक बात पर विचार और करो कि इन्द्रियाँ बाहर की चीजें बनाती हैं, और बाहर की चीजें ही देखती हैं यदि भीतर की चीजें देखने लग जायें तो जीना भारी हो जाये । भीतर की चीजें सूंघने लगे तो क्या हाल हो ? आँख के भीतर मल, मूत्र, खून, माँस देखने लगे, तो घृणा से व्याकुल हो जाये । तो प्रभुकृपा है, जो इन्द्रियाँ बाहर की ही चीजो को देखती है ।

राम –क्या बनाने वाला बनी हुई चीजों में व्यापक होता है ? घड़ी-साज ने घड़ी बनाई, घड़ी अलग है, घड़ी-साज अलग है । हलवाई ने मिठाई बनाई, हलवाई अलग है । दुनियाँ का नियम तो यह है कि बनाने वाला बनी हुई चीज से अलग होता है । प्रभु सब में व्यापक भी हो और संसार का भी बनाता हो भला यह कैसे हो सकता है । दूसरे बिना हाथ पैर के चीजें बन कैसे जाती हैं, समझ में बात आती नहीं ।

श्याम – घड़ीसाज, हलवाई आदि एक देशी और अल्पज्ञकर्त्ता हैं । इनके कर्त्तापन की जहाँ तक जिम्मेदारी है, वहाँ तक उनकी क्रिया और वे पदार्थ के साथ हैं । जहाँ वे न हों वहाँ उन से सम्बन्ध रखने वाली क्रिया हो ही नहीं सकती । जैसे घड़ीसाज ने घड़ी बनाई, बनाने का मतलब यही है कि उनके पुर्जों को परस्पर में जोड़कर उसमें क्रिया दे दी । घड़ीसाज ने पुर्जों को जोड़ा है, पुर्जों को बनाया नहीं । पुर्जों को बनाने वाला दूसरा कर्त्ता है । घड़ीसाज घड़ी के पुर्जों को जोड़ते समय घड़ी के साथ था । अगर न होता तो घड़ी के पुर्जे परस्पर मिलकर घड़ी का रूप धारण नहीं करते । इसी तरह पुर्जे के कर्त्ता और उनकी क्रिया उन पुर्जों के साथ है । यदि वे पुर्जों के साथ न होते

तो पुर्जे न बनते। इस भाँति जिस लोहे से पुर्जे तैयार किये गये उसे लोहे को खाल से निकालने वाले और उसे गलाकर साफ करने वाले खान भट्टी और लोहे के साथ थे।

यदि वे साथ न होते तो न खान से लोहा निकलता और न साफ हो सकता था। इससे मालूम हुआ कि घड़ी बनाने में केवल एक कर्त्ता का एक हाथ नहीं है एवं अनेकों कर्त्ताओं की क्रिया से वह घड़ी तैयार हुई है। जिस कर्त्ता से सम्बन्ध रखने वाला जो क्रिया थी वह कर्त्ता उसके साथ था। इसी तरह हलवाई, सुनार आदि कर्त्ताओं की अवस्था है। वे सब अपनी-अपनी क्रियाओं के कर्त्ता हैं। शेष कर्त्ता तो और ही हैं जिन्होंने वह सामग्री पैदा कर दी, जिससे हलवाई, सुनार आदि अपनी-अपनी क्रियाओं को सफल कर सकें और पदार्थ बना सकें।

अब तुम समझ गये होंगे कि व्यक्ति जिस चीज को बनाता है उसमें केवल उसी का हाथ नहीं होता, अपितु अनेकों व्यक्तियों का हाथ होता हे, तब जाकर चीज बनती है। ऐसा क्यों होता है? इसलिए व्यक्ति अल्पज्ञ और अल्पशक्तिमान् है। वह अनेक कर्त्ताओं का सहयोग पाने पर ही किसी वस्तु को बना पाता है और कर्त्ता अपनी-अपनी क्रियाओं के साथ होते हैं। अब सोचो जब मोटे-मोटे कामों में उनके कर्त्ता साथ होते हैं तो मोटी और बारीक से बारीक सृष्टि बनाने में उस का कर्त्ता प्रभु उसके साथ क्यों न होगा? सृष्टि केवल सूर्य, चन्द्र, तारे, पहाड़, वृक्ष, नदियाँ, मनुष्य, पशु, पक्षी आदि का ही नाम तो नहीं है, और भी अनन्त और सूक्ष्म ऐसी चीजें हैं जिन की हम कल्पना भी नहीं कर सकते। वे सभी चीजें सृष्टि कहलाती हैं।

देखो! पाँच स्थूल भूत, पाँच सूक्ष्म भूत, पाँच तन्मात्रायें अर्थात् शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध अनेक प्रकार के अणु परमाणु जिनसे सृष्टि की रचना होती है, अगर उन का जोड़ने वाला उन के साथ न हो, तो क्या वे पदार्थों का रूप धारण कर सकेंगे? संसार की समस्त चीजें प्रकृति के परमाणुओं से बनी हैं। संसार में आज तक कोई ऐसा यन्त्र नहीं बना, जो परमाणुओं को पकड़ कर जोड़ सके। परमाणु वे सूक्ष्म तथ्य हैं जिनके टुकड़े नहीं हो सकते। प्रभु उन परमाणुओं के बाहर भीतर सर्वत्र विद्यमान है, इसलिए वह उन्हें सूक्ष्म से

सूक्ष्म और स्थूल से स्थूल जगत् बना लेता है। संसार के जड़ पदार्थों में सब से सूक्ष्म है। प्रभु उनसे भी अधिक सूक्ष्म है और इसलिए वह उनमें व्यापक है। अगर व्यापक न होता तो सृष्टि बनाने में उसे भी अन्य कर्त्ताओं की क्रिया का आश्रय लेना पड़ता। जैसा कि संसार के मनुष्यादि प्राणियों को अन्य कर्त्ताओं एवं क्रियाओं का सहारा लेना पड़ता है।

अतः सिद्ध हुआ, प्रत्येक कर्त्ता अपनी क्रिया में व्यापक ही होता है, जहाँ तक उसकी क्रिया की जिम्मेदारी है। रहा ये प्रश्न कि बिना हाथ पैरों के चींजें कैसे बन जाती हैं? अगर यह मान लिया जाये, कि हर चीज हाथ पैरों से ही बनती है तो जो हाथ, पैर चीज बनाते हैं, वे हाथ पैर किससे बने हैं? हाथ, पैर भी तो बने हुए ही हैं। जब हाथ, पैर बिना हाथ पैरों के बन सकते हैं, तो सृष्टि के अन्य पदार्थ बिना हाथ पैरों के क्यों नहीं बन सकते? मैं पूछता हूँ, माता के पेट में जो बच्चा बन रहा है, क्या हाथ, पैरों से बन रहा है? पृथ्वी पर नाना प्रकार के अंकुर होकर वृक्ष का रूप धारण कर रहे हैं। क्या उन्हें हाथ, पैरों से बनाया जा रहा है? देखो! हाथ, पैरों से ही सम्बन्ध रखने वाली चीजें बना सकते हैं, दूसरी चीजें नहीं बना सकते। हाथ पैरों से छोटे-छोटे कीटाणु मच्छर आदि तथा उनके सूक्ष्म अंग कैसे बन सकते हैं। जिस पृथ्वी पर मनुष्यादि प्राणी रहते हैं उसकी परिधि 25000 मील है, इससे भी लाखों करोड़ों गुणा बड़े सूर्य बृहस्पति अदि ग्रह हैं, ये सब के सब हाथों से कैसे बनाये जा सकते हैं? इन समस्त पदार्थों की नियमपूर्वक बनाने वाला सर्वशक्तिमान् सर्वव्यापक प्रभु ही है। वही सारा कार्य नियमपूर्वक चला रहा है।

राम – मित्र, आप एक न एक नई बात निकाल देते हैं। नियमपूर्वक क्या कार्य चल रहा है? क्या नियमपूर्वक चीजें बनी हुई हैं? मैं देखता हूँ कहीं ऊँचा पहाड़ है, कहीं नीची खाई है। कहीं भयानक जंगल हैं। कहीं रेतीला मैदान है। कहीं झाड़, झंकाड़ और झाड़ियाँ हैं। इनमें कौनसा क्रम और कौनसा नियम है? सब यूं ही ऊबड़ खाबड़ बेतरतीब और बेनियम संसार बना हुआ है। नियमपूर्वक जो कार्य होता है, वह एक ढंग के साथ होता है। व्यक्ति मकान बनाता है, इसमें नियमपूर्वक चौक, आँगन, कमरे, रसोईघर शौचालय की व्यवस्था करता है। माली बाग़ लगाता है। उसमें नालियाँ,

क्यारियाँ, गमले, नहरें, रौंसे अनेक प्रकार के पेड़-पौधे नियमपूर्वक लगाता है। दूकानदार दूकान लगाता है, सारा सौदा नियमपूर्वक सजाता है। व्यक्ति के कार्य में तो नियम पाया जाता है, लेकिन तुम बेढ़गी और क्रम विरुद्ध सृष्टि का नियमपूर्वक बतलाते हो जो सरासर प्रत्यक्ष के विरुद्ध है। मेरी समझ में सृष्टि में कोई नियम नहीं है।

श्याम – सृष्टि में कोई नियम नहीं है, यह कहना बेसमझी का प्रमाण देना है। मैं पूछता हूँ कि क्या कारण है कि सूर्य पूर्व से उदय होता है और पश्चिम में अस्त हो जाता है? क्यों नहीं पश्चिम से उदय होने लगता, क्या यह नियम नहीं है? व्यक्ति की बनाई हुई अच्छी से अच्छी घड़ी तेज सुस्त हो जाती है, परन्तु प्रभु की बनाई हुई सूर्य रूपी घड़ी में कभी एक सेकण्ड का भी अन्तर होता है? चन्द्रमा के घटने-बढ़ने और छिपने का नियम कैसा अटल है। इसी नियम के आधार पर वर्षों आगे होने वाले सूर्य ग्रहण और चन्द्र ग्रहण को बतलाया जा सकता है। इसी प्रकार अन्य ग्रहों और उपग्रहों का हाल है। जरा सोचो तो सही क्या कारण है कि चने के बीच से चना ही पैदा होता है, गेहूँ नहीं? क्या कारण है कि आम से आम ही पैदा किया जा सकता है। कोई अन्य फल नहीं? क्या कारण है कि बच्चा उत्पन्न होकर पहले जवान होता है बाद में वृद्ध? क्यों नहीं पहले बूढ़ा होकर जवान और बाद में बच्चा होता? क्या कारण है कि आँख से दिखाई देता है, सुनाई नहीं देता? क्या कारण है कि नाक सूंघ सकती है, चख नहीं सकती? इन सबके लिए नियम ही तो है। वह कह देना कि कहीं पहाड़ हैं, कहीं नदियाँ हैं, कहीं समुद्र हैं कहीं ऊँचे-नीचे टीले हैं, कहीं झाड़-झंकाड़ हैं, इसलिए सृष्टि नियमबद्ध नहीं कोरी अज्ञानता है।

तुम अपनी बुद्धि के पैमाने से सृष्टि को नापते हो संसार का नियम है कि जो बात जिसकी समझ में नहीं आती वह उसमें दोष निकालता है। एक चींटी जब व्यक्ति के शरीर पर चढ़ जाती है और सिर पर पहुँचती है, तो बालों में उलझ कर सोचती है कि शरीर कैसा बेनियम बना हुआ है। कैसा सिर पर झाड़-झंकाड़ है। सिर से उतर कर नीचे माथे पर आती है, तो सोचती है, यहाँ कैसा साफ मैदान पड़ा हुआ है। फिर जरा नीचे उतरती है, तो आँखों की भौंहों में उलझकर सोचती है, यहाँ कैसा काँटों का जाल बिछा हुआ है। फिर जरा

नीचे उतरती है और आँखों के पास आती है तो सोचती है, अरे! यहाँ कैसी खाई बना रक्खी है। फिर जरा नीचे उतरती है और नाक पर चढ़ कर बोलती है। यहाँ पहाड़ खड़ा कर रखा है। नाक के नीचे उतर कर दोनों छेद्रों को देखकर कहती है यहाँ सुरंगें खोद रखी हैं? और नीचे उतरती है तो मूँछों में उलझकर बोलती है यहाँ घना जंगल खड़ा कर रखा है। वह चींटी अपनी बुद्धि के नाप से व्यक्ति के शरीर को नापती है और उसे बेनियम बताती है।

यदि चींटी की सुविधा के लिए व्यक्ति के शरीर को बिल्कुल सपाट और साफ मैदान कर दिया जाए, नाक के छेद बन्द कर दिये जायें, मूँछ और सिर के बाल साफ कर करके आँखों के गड्ढे भर दिये जायें, नाम को काटकर माथे की तरह सारी शक्ल को समतल कर दिया जाये, तब कहीं उसके लिए व्यक्ति का शरीर नियमपूर्वक हो सकती है। मैं पूछता हूँ यदि चींटी की भावना और बुद्धि के अनुसार व्यक्ति का शरीर बना दिया जाये तो वह व्यक्ति, व्यक्ति रहेगा? उसमें वह सौन्दर्य और ज्ञानेन्द्रियों तथा कर्मेन्द्रियों का नियमपूर्वक व्यवहार रहेगा? हरगिज नहीं? दूसरा उदाहरण लो। एक कारीगर मशीन बनाता है। उस मशीन में हज़ारों पुर्जे हैं। कोई पुर्जा गोल है, कोई लम्बा और कोई चौड़ा है, कोई टेढ़ा है, कोई तिरछा है कोई बहुत बड़ा है, कोई बहुत छोटा है। एक अज्ञान उस मशीन को देखकर कहता है कि मशीन के पुर्जे बनाने वाला मूर्ख है। कोई पुर्जा कितना बड़ा, कोई कितना छोटा है, कोई कितना लम्बा और कोई कितना चौड़ा, कोई गाल, कोई चपटा—यह कैसा बेनियम सिलसिला जोड़ रखा है। यह कैसे बेतरतीब पुर्जे बनाये हें। बताओ उस व्यक्ति का ऐसा सोचना क्या बुद्धिपूर्वक है।

मशीन के बनाने वाले ने जिस-जिस प्रकार के पुर्जे बनाना ठीक समझा, उसी प्रकार के बनाये। वह जानता था कि इस प्रकार के पुर्जों से मशीन चल सकेगी। वह प्रयोजन सिद्ध हो सकेगा जिसके लिए मशीन बनाई गई। अगर वह सार पुर्जे एक जैसे ही गोल या लम्बे बना देता तो मशीन चल सकती थी कभी नहीं। यही हाल प्रभु और उसकी सृष्टि का है। इस सृष्टि रूप मशीन में कहीं बहुत बड़े पहाड़ हैं, कहीं छोटे-छोटे टीले हैं, कहीं नदियाँ हैं, कहीं वन और झाड़ियाँ हैं। परन्तु इस सृष्टि रूपी मशीन का एक प्रयोजन है। वह

प्रयोजन है—जीवों का कल्याण। अज्ञानी व्यक्तियों को सृष्टि रूपी मशीन के पुर्जे भद्दे और बेनियम नज़र आते हैं, क्योंकि वह न तो जगत् का प्रयोजन समझते हैं और न सृष्टिरूपी मशीन के समुद्र, नदी, पहाड़ आदि पुर्जों की उपयोगिता समझते हैं। माली और दुकानदार आदि का उदाहरण तुमने दिया है, उसके नियम अत्यन्त छोटे हैं, इसलिए उन्हें तुम शीघ्र ही समझ लेते हो। सृष्टि के नियम विशाल और अत्यन्त सूक्ष्म हैं, जिन्हें तुम नहीं समझ पाते हो। जरा विचार तो करो, जिस मस्तक से संसार के व्यति नियम बनाते हैं वह मस्तक भी तो उसी नियामक प्रभु का बनाया हुआ है जिसने सृष्टि के असंख्य नियम बनाये हैं। अगर संसार के नियम न होते, तो प्रभु को मानता ही कौन? सृष्अि के अटल नियम ही सृष्टिकर्त्ता प्रभु का प्रमाण देते हैं।

राम – अच्छा सृष्टि तो प्रभु ने बनाई, प्रभु को किसने बनाया?

श्याम – बने हुए पदार्थ कार्य होते हैं। उनको उपादान कारण कर्त्ता की आवश्यकता होती है, प्रभु बना हुआ पदार्थ नहीं है। वह अनादि और सनातन है। अतएव यह प्रश्न ही नहीं उठता कि प्रभु को किसने बनाया। जो स्वयं कर्त्ता है, उसका कर्त्ता कौन? यदि कर्त्ता का कर्त्ता हो, तो कर्त्ता, कर्त्ता नहीं रहता, कारण बन जाता है। कर्त्ता वह है जो स्वतन्त्र हो। जो बने हुए पदार्थ हैं वह कर्त्ता नहीं होते। मनुष्यादि प्राणी जो कर्त्ता कहाते हैं उनका शरीर कर्त्ता नहीं साधन है। कर्त्ता आत्मा है।

राम – अच्छा कर्त्ता का कर्त्ता न सही, तुम यह बतलाओ, हमें प्रभु को क्यों मानना चाहिए? हम उसकी स्तुति, प्रार्थना, उपासना और भक्ति क्यों करें? हमारे जीवन से उसका सम्बन्ध क्या है?

श्याम – इस पर विचार फिर करेंगे।

3. प्रभुभक्ति क्यों करें?

राम – लो मित्र, मैं आ गया । कल के प्रश्न का उत्तर दो ।

श्याम – तुम्हारा कल का प्रश्न था प्रभुभक्ति क्यों करनी चाहिए, उसकी स्तुति, प्रार्थना से क्या लाभ है? अच्छा सुनो संसार का प्रत्येक पदार्थ अपने केन्द्र की ओर जाना चाहता है । यह नियम जड़ और चेतन दोनों प्रकार के पदार्थों पर लागू होता है । अग्नि की ज्वाला सदैव ऊपर की ओर उठती है क्योंकि अग्नि का भंडार सूर्य ऊपर की ओर विद्यमान है । मिट्टी का ढेला चाहे कितनी जोर से ऊपर की ओर फेंको, वह सदैव अपने भंडार पृथ्वी की ओर ही अन्त में आता है । सूर्य की किरणें समुद्र के जल को भाप बनाकर हवा में सम्मिलित कर देती हैं, परन्तु वही भाप बादल में परिवर्तित होकर जल बनकर बरसती हैं और अनेकों नदी-नालों द्वारा पुनः समुद्र में पहुँच जाती है । यही अन्य पदार्थों का हाल है । संसार में प्रत्येक वस्तु का भण्डार मौजूद है । जल का भण्डार सागर, अग्नि का भण्डार सूर्य, वायु का भण्डार वायु चक्र, मिट्टी का भण्डार पृथ्वी, घटाकाश, महाकाश, का भण्डार बृहदाकाश है । इसी भाँति ज्ञान का भी भण्डार जगत् में मौजूद है और वह प्रभु है । मनुष्य को जो भी ज्ञान प्राप्त हुआ है, वह प्रभु से ही हुआ है ।

किसी व्यक्ति में बिना पढ़े पढ़ाये ज्ञानप्राप्ति की योग्यता नहीं है । यदि व्यक्ति में बिना पढ़ाई ज्ञानप्राप्ति की योग्यता होती तो स्कूल, कॉलेज की आवश्यकता ही न थी और न पढ़ाने वालों की आवश्यकता थी । माता-पिता अपने बच्चों को आरम्भ में बोलना सिखाते हैं और पदार्थ का ज्ञान कराते हैं । यह रोटी है, यह पानी है, यह बहन है, यह भाई है, ऐसी-ऐसी हज़ारों बातें याद कराते हैं । फिर वे ही बच्चे स्कूल में गुरु द्वारा संसार के विविध विषयों का ज्ञान प्राप्त करते हैं । लेकिन उन माताओं-पिताओं तथा अध्यापकों, प्रोफेसरों का ज्ञान भी अपनी नहीं होता है । उन्होंने भी अपने माता-पिता और गुरुओं से वहीं बातें सीखी हैं । इस तरह व्यक्ति एक दूसरे से ज्ञान प्राप्त करता हुआ चला आया है । अब प्रश्न उत्पन्न होता है, जब सबने एक दूसरे से ज्ञान प्राप्त किया है, तो सृष्टि के आदि के व्यक्तियों ने किन माता-पिता और गुरुओं से

ज्ञान सीखा? क्योंकि उनसे पहले तो कोई था ही नहीं। उत्तर यही है, उस समय उन्होंने प्रभु से ज्ञान सीखा। यदि कहा जाए कि प्रभु ने ज्ञान कैसे सिखाया, कैसे प्रभु ने मनुष्यों को पढ़ाया, जबकि उसके शरीर ही नहीं है? इसका उत्तर यह है कि ज्ञान देने और समझने में अन्तर होता है। पढ़ाया जाता है शब्दों के द्वारा और ज्ञान दिया जाता है आत्मा में।

प्रभु सर्वत्र व्यापक होने के कारण उन व्यक्तियों में भी व्यापक होता है। जिन को वह सृष्टि के आदि में बनाता है। अतएव अपनी ज्ञानमयी शक्ति से चार ऋषियों को आत्मा में ज्ञान का प्रकाश करता है, जिनके अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा नाम हैं। वे ही ऋषि शब्दों द्वारा संसार के अन्य मनुष्यों को फिर पढ़ाते हैं और तब पढ़ने और पढ़ाने का क्रम चल पड़ता है। यदि प्रभु सृष्टि के आदि में ऋषियों को ज्ञान न देते, तो पढ़ने-पढ़ाने की परम्परा चल ही नहीं सकती। इससे सिद्ध है, कि व्यक्ति ने जो भी ज्ञान सीखा है वह परम्परा से सीखा है और ज्ञान का विकास किया है वह प्रभु की दी हुई बुद्धि से प्रभु की बनाई हुई सृष्टि को देखकर किया है। व्यक्ति ज्ञान का विकास तो कर सकता है परन्तु ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता, जब तक उसे ज्ञान प्राप्त न कराया जाये। आदि सृष्टि में ऋषियों के हृदय में बीज रूप प्रभुज्ञान देते हैं। बाद में वृक्ष रूप विकास ऋषियों और बुद्धिमान व्यक्तियों द्वारा होता है। यही सदा से नियम रहा है, और रहेगा।

जब संसार का प्रत्येक पदार्थ अपने भण्डार की ओर जाना चाहता है तो चेतन जीवात्मा जो कि अल्पज्ञ है वह ज्ञान के भण्डार चेतन प्रभु की ओर जाना क्यों न चाहेगा? आत्मा भी तो परमात्मा की ओर जाना चाहता है, क्योंकि उसका विकास उन्नति बिना प्रभु के हो ही नहीं सकती। जड़ का जड़ से चेतन का चेतन से विकास होता है। संसार के किसी भी जड़ पदार्थ से चेतन जीवात्मा की उन्नति नहीं हो सकती। हाँ, जड़ पदार्थों से जड़ शरीर की उन्नति अवश्य हो सकती है, यदि वह उनका ज्ञानपूर्वक उपयोग करें। जीवात्मा अज्ञानता वश संसार के पदार्थों में उन्नति की खोज करता है परन्तु उनसे उन्नति होती नहीं इसलिए वह अशान्त रहता है। संसार में जितने भी दुःख है वह अज्ञानता के कारण हैं। पदार्थों की वास्तविकता का अगर

जीवात्मा को पता हो तो उसे दुःख हो ही नहीं सकता । दुःख और बन्धनों का आवरण जीवात्मा पर भी तभी तक है जब तक वह अविद्या को विद्या, असतय को सत्य और जड़ को चेतन समझ रहा है ।

ज्ञान का भण्डार प्रभु ही सुखों का भण्डार है । उसके अतिरिक्त सुख संसार के किसी भी पदार्थ में नहीं है । अगर संसार के पदार्थों में सुख होता तो सारा संसार सुखी नज़र आता, परन्तु अवस्था यह है कि संसार का प्रत्येक प्राणी सुख चाहता है । जब सुख चाहता है तो पता चला सुख उसके पास नहीं है । यदि होता तो सुख चाहता ही क्यों? बस प्रभुभक्ति और स्तुति, प्रार्थना करने का यही अर्थ है कि व्यक्तियों को प्रभु से प्रेम हो जाए, जो उसके जीवन का उद्देश्य है । ज्यों-ज्यों व्यक्ति प्रभु की स्तुति, प्रार्थना और उपासना शुद्ध मन से करेगा त्यों-त्यों वह प्रभु के समीप होता चला जायेगा और अन्त में संसार के समस्त दुःखों और बन्धनों से छूटकर प्रभु को प्राप्त हो जायेगा ।

राम – यह तुम्हारा कहना मिथ्या है कि संसार के पदार्थों में सुख नहीं है । यदि संसार के पदार्थों में सुख न होता, तो संसार के प्राणी संसार के पदार्थों को क्यों चाहते? यदि धन में सुख न होता तो लोग धन को क्यों एकत्र करते? भोजन में सुख न होता तो लोग भोजन क्यों करते? वस्त्रों में सुख न होता तो लोग वस्त्र क्यों पहनते? यदि मकान में सुख न होता, तो लोग उन्हें क्यों बनाते? तात्पर्य यह है, कि संसार के प्रत्येक पदार्थ में सुख है तभी लोग उसे चाहते हैं और उन्हें छोड़ना नहीं चाहते । पदार्थों के संयोग से व्यक्ति सुख मानता है और वियोग में दुःख मानता हैं फिर कैसे मान लें कि संसार के पदार्थों में सुख नहीं ।

श्याम – वास्तव में संसार के पदार्थों में सुख नहीं है, सुख तो प्रत्येक व्यक्ति के अपने ही अन्दर है । जब व्यक्ति संसार के किसी पदार्थ का प्रयोग करता है और उसे सुख प्रतीत होता है तो वह समझता है कि उस पदार्थ से ही सुख मिल रहा है, वस्तुतः सुख उस पदार्थ से नहीं मिल रहा है । उसी की चित्त की एकाग्रता से उसे सुख अनुभव हो रहा है । कुत्ता जब हड्डी को चूसता है, तो दाढ़ के छिल जाने से खून निकलने लगता है । ज्यों-ज्यों खून निकलता है त्यों-त्यों वह और जोर के साथ चूसता है । वह समझता है कि हड्डी से ही खून

निकल रहा है। लेकिन निकल रहा है उसी दाढ़ से। हड्डी में खून कहाँ है? ठीक इसी प्रकार संसार के पदार्थों में सुख कहाँ है? सुख तो अपने ही अन्दर है, जो प्रत्येक प्राणी को अनुभव होता है।

देखो! यदि धन में सुख होता, तो कोई धनी दुःखी न देखा जाता। न ही कोई धनी बीमार होता या मरता। परन्तु जितनी चिन्ताएं भय और दुःख धनियों को है, उतने निर्धन को नहीं। यदि एक धनी व्यक्ति बीमारी से कष्ट पा रहा है तो वह धन से दवा खरीद सकता है परन्तु स्वास्थ्य नहीं खरीद सकता। वह धन पुस्तकें खरीद सकता है, परन्तु धन से विद्या प्राप्त नहीं की जा सकती। विद्या तो परिश्रम से ही प्राप्त कर सकेगा। इसी तरह धन से भोजन खरीद सकता है, भूख नहीं खरीद सकता। ऐसे भी मनुष्य संसार में हैं जिनके पास करोड़ों रुपये की सम्पत्ति है परन्तु कुछ भी हजम नहीं कर सकते। अब बताओ धन से सुख कहाँ है? यदि भोजन में सुख माना जाए तो दो रोटी खाने में जो सुख मिला है आठ रोटी खाने में चौगुना सुख मिलना चाहिए। क्योंकि सुख जब रोटी का धर्म है तो रोटी की वृद्धि के साथ सुख की मात्रा भी बढ़नी चाहिए। परन्तु होता यह है कि भूख से यदि अधिक भोजन किया जाता है तो पेट में दर्द हो जाता है और डॉक्टर की आवश्यकता पड़ने लगती है। भूख के अन्दर रूखा सूखा भोजन भी अमृत के समान प्रतीत होता है। भूख न होने पर अमृत में भी स्वाद नहीं आता। इसी तरह वस्त्रों को लो।

यदि वस्त्रों में सुख माना जाये तो जाड़े में ऊन और रुई के मोटे वस्त्र जो सुखदायक प्रतीत होते हैं, गर्मी में भी वे ही वस्त्र वैसे ही सुखदायक प्रतीत होने चाहिएं और जो वस्त्र गर्मी में सुखदायक प्रतीत होते हैं वे सर्दी में भी वैसे ही प्रतीत होने चाहियें। जब सुख वस्त्रों का धर्म है तो प्रत्येक समय उनसे सुख ही मिलना चाहिये। क्या कारण है गर्मी के वस्त्र सर्दी में और सर्दी के वस्त्र गर्मी में आराम नहीं देते। जो जिस का धर्म है वह प्रत्येक समय जैसा ही रहना चाहिये। जैसे अग्नि का धर्म जलाना है, उसे किसी समय छुओ, फौरन जलाएगी। मिश्री का धर्म मीठापन है किसी समय खाओ मीठी प्रतीत होगी। इसी प्रकार यदि संसार के पदार्थों का धर्म सुख देना होता तो संसार के पदार्थ प्राप्त करने में व्यक्ति सुख की खोज न करता। उन्हें तो प्रत्येक समय सुख का

अनुभव ही चाहिये था। भला बताओ तो एक व्यक्ति जिसे 105 डिग्री का बुखार चढ़ा हुआ है उसको रेशम की डोरी से बने हुए, मखमली और सोने के पलंग पर लिटा देने से उसके दुःख में कोई कमी नहीं आयेगी। इसलिए मैं कहता हूँ कि सुख संसार के पदार्थों में नहीं, सुख का भण्डार केवल प्रभु ही है।

राम –यदि ससार के पदार्थों में वास्तव में सुख नहीं, सुख अन्दर है तो लड्डू या जलेबी खाने पर आनन्द क्यों आता है? मिट्टी खाने से क्यों नहीं आता। रोटी खाने में आनन्द क्यों आता है, पत्थर खाने में क्यों नहीं आता? क्या कारण है कि मिश्री खाने से आनन्द आता है घास खाने से नहीं? क्या कारण है किसी सुन्दर दृश्य को देखने से आनन्द आता है, श्मशान को देखने से नहीं?

श्याम – लड्डू, जलेबी, मिश्री आदि जितने भी खाने योग्य पदार्थ हैं उन्हें खाने पर उन्हीं के गुणों का अनुभव होता है। आनन्द का नहीं। जैसे मिश्री खाई तो मिठास मालूम दी और मिर्च खाई तो कड़वाहट मालूम दी। अब न तो कड़वाहट का नाम आनन्द है, न मिठास का। जिस चीज में व्यक्ति के चित्त की एकाग्रता हो गई, उसमें होने से आनन्द समझ लिय। यदि मिश्री में आनन्द होता तो बुखार की अवस्था में भी आनन्द देती, परन्तु बुखार की अवस्था में मिश्री बेस्वाद प्रतीत होती है। इसी प्रकार मिर्च के खाने का जिसे अभ्यास नहीं है, उसे मिर्च विष के समान लगती है। यही अवस्था संसार के अन्य पदार्थों की है। रही यह बात कि मिट्टी खाने से आनन्द क्यों नहीं आता? मिट्टी खाने से भी आनन्द आता है, अगर उसमें चित्त की एकाग्रता हो जाये। बहुत से भाइयों और बहिनों को मैंने कच्ची-मिट्टी के सकोरे और चिकनी मिट्टी खाते देखा है। बहुत से जानवर कंकड़ और पत्थर खाते हैं। कंकड़-पत्थर को जाने दो। शराब जैसे दुर्गन्ध तीखी और अफीम जैसे कड़वी वस्तु में लोग आनन्द मानते हैं। परन्तु क्या वह आनन्द उन पदार्थों में हैं? नहीं।

आनन्द तो उन्हें मिलता है कि उन्हीं के चित्त के एकाग्रता से। जितनी देर चित्त की एकाग्रता रहती है उतनी देर तक आनन्द भी रहता ह। प्रश्न हो सकता है, किसी पदार्थ में चित्त की एकाग्रता कैसे होती है? उत्तर है कि किसी

भी चीज का व्यक्ति जब अभ्यासी हो जाता है, तो उस चीज में उसको क्षणिक एकाग्रता हाने ही लगती है क्योंकि अभ्यास करते-करते मन पर उस वस्तु के संस्कार पड़ जाते हैं और वे संस्कार बार-बार मनुष्य को उसी वस्तु के प्रयोग के लिए प्रेरित करते है । । यही बात किसी सुन्दर दृश्य को देखने की है । व्यक्ति अपना मन प्रसन्न करने के लिए नदी, सागर, वन-उपवन तथा पहाड़ों का भ्रमण करने कहीं जाता है । लेकिन अगर उसके पीछे कोई भयंकर मुकद्दमा हो तो उसे किसी स्थान पर भी आनन्द नहीं आता । सारे स्थान श्मशान के समान प्रतीत होते हैं । क्योंकि मुकद्दमे की चिन्ता के कारण उसके मन में एकाग्रता नहीं ।

एक व्यक्ति आकर्षक दृश्य, संगीत गायन आदि का आनन्द लेने सिनेमा जाता है, परन्तु घर में उसका प्रिय पुत्र बीमार है । वह सिनेमा देख रहा है, फिर भी उसे आनन्द नहीं आता । क्यों ? इसलिए कि पुत्र के रोग ग्रस्त होने के कारण उसके चित्त की एकाग्रता नहीं होती । देखो ! यदि मैं तुम्हें इस समय स्वादिष्ट लड्डू खाने को दूँ, और तुम उसे खाने लगो, परन्तु मैं एक काम करके तुम्हारा ध्यान दूसरी ओर कर दूँ तो तुम सारा लड्डू खा जाओगे परन्तु उसका स्वाद तुम्हें मालूम ही नहीं देगा । प्रायः होता भी है, व्यक्ति किसी पदार्थ को खा जाता है, परन्तु ध्यान न होने के कारण वह उसका दोष-गण जान ही नहीं पाता । अतएव सिद्ध हुआ कि सुख बाहर के पदार्थों में नहीं केवल चित्त की एकाग्रता में है ।

राम – तुम तो कहते थे कि सुख का भण्डार परमात्मा है । अब कहते हो सुख चित्त की एकाग्रता में है, यह दो तरह की बातें क्यों ?

श्याम – चित्त की एकाग्रता में ही सुखस्वरूप परमात्मा का अनुभव होता है उसी से सुख मिलता है । अज्ञानी मनुष्य समझता है कि सुख बाहर के पदार्थों से मिल रहा है । ये दो तरह की बातें नहीं हैं । बात एक ही है, परन्तु है जरा गहराई से सोचने की चीज । संसार के पदार्थों में अभ्यास के कारण क्षणिक एकाग्रता होती है, इसलिए क्षणिक आनन्द मिलता है, यदि पूर्ण रूपेण भगवान् की भक्ति में मन एकाग्र करने का अध्ययन किया जाये तो अन्त में परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है, जो मानवजीवन का लक्ष्य है । इसलिए प्रभु

की स्तुति, प्रार्थना, उपासना की आवश्यकता है ताकि चित्त अधिक से अधिक एकाग्र हो, और अधिक से अधिक आनन्द मिले ।

राम – इसका क्या प्रमाण हे, कि जितना चित्त अधिक एकाग्र होगा, उतना ही अधिक आनन्द मिलेगा ?

श्याम – इसका प्रभाव मैं तुम्हें जागृत और सुषुप्ति अवस्था से देता हूँ । देखो ! जागने की हालत में व्यक्ति की वृत्तियाँ संसार के पदार्थों की ओर फैली रहती है । कभी मन किसी पदार्थ की ओर जाता है कभी किसी पदार्थ की ओर । इस कारण उसमें स्थिर एकाग्रता उत्पन्न नहीं होगी । लेकिन सोने की हालत में उसके मन की वृत्तियाँ नितान्त एकाग्र हो जाती हैं, तब उसे बड़ा आनन्द आता है । प्रातःकाल उठकर कहता है "मैं बड़े सुख से सोया बड़ी नींद आई ।'' उसे सोने में जो आनन्द मिला चित्त की एकाग्रता के कारण मिला । क्योंकि आत्मा का प्रकृति के पदार्थों से सम्बन्ध छूट जाने के कारण प्रभु से सम्बन्ध हो गया । आत्मा का सम्बन्ध या तो प्रभु से होता है या प्रकृति से होता है । जितना अधिक सम्बन्ध प्रकृति से होगा, उतना ही दुःख बढ़ता जाएगा ।

एक व्यक्ति जलखाने में पड़ा हुआ है । बुखार से पीडित है, पेट में एक फोड़ उठा हुआ है । लाखों रुपये का कर्ज़दार है, घर में आग लग गई है, स्त्री पुत्र का देहान्त हो गया । तात्पर्य यह है कि वह अनेक दुःखों और चिन्ताओं से ग्रसित है । ये चिन्ताएं और दुःख कब तक हैं ? जब तक वह जाग्रत अवस्था में है परन्तु यदि वह किसी प्रकार सो जाता है तो उसके सारे दुःख छूट जाते हैं । उस समय जो आनन्द एक राजा को आता है वही उसे आता है । क्योंकि उस समय मन की वृत्तियाँ फैली हुई नहीं होती । एक स्थान पर एकत्रित होती हैं । चित्त की वृत्तियों की एकाग्रता का नाम ही योग अर्थात् प्रभु से मेल है । सुषुप्ति अवस्था में तो आत्मा का बिना ज्ञान के प्रभु से मेल होता है । परन्तु स्तुति, प्रार्थना और उपासना द्वारा जब ज्ञानपूर्वक प्रभु से मेल होता है तो उसको आत्मिक उन्नति कहा जाता है । यह उन्नति समाधि द्वारा पराकाष्ठा प पहुँच जाता है । जीवात्मा को परमात्मा में तन्मय करा देती है, जो जीवन का मूल उद्देश्य है ।

राम – स्तुति, प्रार्थना, उपासना किसे कहते हैं ?

श्याम – श्रद्धापूर्वक प्रभु के गुणों का वर्णन करना स्तुति उन्हीं गुणों से अपने दोषों को सुधारने के लिए प्रभु से सहायता मांगने का नाम प्रार्थना। संसार के पदार्थों से अहंकार का अभाव कर मेरे समीप प्रभु और मैं प्रभु के समीप हूँ। ऐसी धारणा बनाने का नाम उपासना है।

राम – मित्र! आप प्रभु को शरीर से रहित मानते हैं परन्तु संसार के बहुत से लोग प्रभु को शरीरधारी मानते हैं उसकी भक्ति करते हैं। मैं पूछता हूँ, यदि प्रभु को शरीरधारी अथवा साकार माना जाये तो उसमें दोष क्या है?

श्याम – इन प्रश्न का उत्तर फिर दिया जायेगा।

4. प्रभु साकार क्यों नहीं?

राम – मित्र ! कल के प्रश्न का उत्तर दो ।

श्याम – तुम्हारा कल का प्रश्न था कि प्रभु को साकार माना जाये तो क्या दोष हैं? अच्छा सुनो ! प्रभु को साकार मानने में एक दोष नहीं अनेकों दोष हैं । देखो ! प्रभु का लक्षण सच्चिदानन्द है । इसमें तीन पद हैं–सत्, चित्त और आनन्द । सत् का अर्थ है भूत, भविष्य, वर्तमान इन तीनों कालों में एक रस रहने वाला दूसरे शब्दों में जिसमें किस प्रकार का परिवर्तन न हो सके वह है । ज्ञान वाले को चित्त कहते हैं और तीनों कालों में दुःख के अभाव का नाम आनन्द है । प्रभु सच्चिदानन्द इसलिए है कि परिवर्तन कभी नहीं होता । उसका ज्ञान कभी नष्ट नहीं होता और न कभी उस में दुःख व्याप्त होता है । संसार के जितने भी साकार पदार्थ हैं, उन सब में परिवर्तन होता है इसलिए वी सत् नहीं । चित्त तो केवल आत्मा अथवा परमात्मा ही है, जोकि निराकार है । कोई भी साकार या शरीरधारी दुःख से बच नहीं सकता । तीनों काल उस में आनन्द नहीं रह सकता । सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास, भय, शोक, रोग, बुढ़ापा, मृत्यु आदि प्रत्येक साकार या शरीरधारी को सताते हैं । प्रभु इन दोनों से सर्वथा अलग है । अतः प्रभु को साकार मानने में पहला दोष यह आता है कि वह सच्चिदानन्द और निर्विकार नहीं रहता । क्योंकि प्रत्येक साकार पदार्थ में जन्म, वृद्धि, क्षय, जरा, मृत्यु आदि विकार मौजूद हैं ।

दूसरा दोष साकार मानने में यह है–प्रभु सर्वव्यापक नहीं रहता । क्योंकि प्रत्येक साकार पदार्थ एकदेशी होता है । तीसरा दोष यह आता है–प्रभु अनादि और अनन्त नहीं रहता क्योंकि प्रत्येक साकार शक्ल वाला पदार्थ उत्पन्न होता है इसलिए उस का आदि होता है । वह अनादि नहीं होता, और न अनन्त होता है । जिसका आदि है, उसका अन्त अवश्य है । जो उपन्न होगा वह नष्ट अवश्य होगा । जिसका एक किनारा है, उसका दूसरा किनारा होता ही है । चौथा दोष यह आता है–प्रभु सर्वज्ञ नहीं रहता । क्योंकि जब साकार होगा तो एक जगह होगा, सब जगह नहीं । जब सब जगह नहीं होगा तो सब जगह का ज्ञान भी नहीं होगा । एक जगह का होगा । फलतः प्रभु अन्तर्यामी भी न रहेगा, क्योंकि वह प्रत्येक के मन की बात नहीं जान सकेगा ।

पाँचवाँ दोष यह आता है—प्रभु नित्य नहीं रहता, अनित्य हो जाता है। नित्य उसे कहते हैं कि पदार्थ हो उसका कारण कोई न हो। वह किसी के मेल से बना हुआ न हो। साकार पदार्थ के मेल से बना हुआ होता है।

छठा दोष यह आता है— प्रभु सर्वाधार नहीं रहता पराधार हो जाता है। प्रभु सर्वाधार इसलिए है कि सारा संसार उसी के सहारे चल रहा है। सारे ब्रह्माण्ड को उसी ने धारण किया है। यदि प्रभु को साकार माना जाये, तो वह किसी न किसी के सहारे रहेगा। यही कारण है मतवादियों ने प्रभु को साकार मान कर उसके स्थान नियत किये हैं। किसी ने सातवां आसमान, किसी ने चौथा आसमान, किसी ने क्षीर सागर, किसी ने गोलोक, किसी न बैकुण्ठलोक आदि स्थान उसके रहने के बतलाये हैं। जिस प्रभु के आधार पर सारा जगत् है, लोगों ने उसे साकार मानकर जगत् को उसका आधार बना दिया। जब प्रभु ही जगत् के सहारे हो गया तो फिर संसार किसके सहारे रहेगा। इसी प्रकार और भी बहुत से दोष साकार मानने में आते हैं।

राम – विद्वानों का मत है कि प्रभु निराकार तो है, परन्तु समय-समय पर अवतार धारण कर साकार हो जाता है। जैसे भाप निराकार है लेकिन समय पर जम कर बादल या बर्फ बन जाती है। 'अग्नि' सर्वव्यापक है, निराकार है, परन्तु समय पर स्थूल रूप में प्रकट हो जाती है। ऐसे अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। जब संसार के भौतिक पदार्थ निराकार से साकार हो जाते हैं जो प्रभु निराकार से साकार क्यों नहीं हो सकता?

श्याम –भाप और अग्नि का जो उदाहरण तुमने दिया हे वह ठीक प्रतीत नहीं होता। जरा गहराई से सोचो। भाप और अग्नि एक पदार्थ नहीं है किन्तु अनेक परमाणुओं के समुदाय हैं, जल के असंख्य छोटे-छोटे परमाणु भाप बन जाते हैं, वे ही परमाणु पुनः स्थूल होकर बदल, बर्फ जल का रूप धारण कर लेते हैं। भाप यदि केवल एक ही परमाणु होती और एक रस होती तो वह कभी स्थूल नहीं हो सकती थी। यही अग्नि के परमाणु की अवस्था है वे अनेक होने के कारण परस्पर में मिलकर स्थूल हो जाते हैं और अग्नि का प्रचण्ड रूप धारण कर लेते हैं। यह कहना कि अग्नि सर्वव्याप और निराकार है, बड़ी भूल है। अग्नि पृथ्वी और जल से सूक्ष्म है इसलिए पृथ्वी और जल में

तो व्यापक मानी जा सकती है परन्तु आकाश और वायु में नहीं। हाँ, आकाश और वायु यह दोनों ही अग्नि में व्यापक है। क्योंकि यह दोनों अग्नि से सूक्ष्म हैं। सूक्ष्म पदार्थ स्थूल में व्यापक होता है। जिन-जिन पदार्थों में अग्नि व्यापक है, वे सब पदार्थ रूप वाले हैं।

संसार में जो भी रूप नज़र आता है वह सब अग्नि का गुण ही रूप है। अतएव सिद्ध हुआ भौतिक पदार्थ सूक्ष्म से स्थूल और स्थूल से सूक्ष्म इसलिए हो जाते हैं कि वे अनेक परमाणुओं से मिलकर बने हुए होते हैं। प्रभु सर्वव्यापक एक ओर एक रस है। अतः वह निराकार से साकार नहीं हो सकता। रहा यह प्रश्न कि प्रभु समय पर अवतार धारण करता है। यह कोरी कल्पना के और कुछ नहीं है। देखो! अवतार शब्द का अर्थ है 'उतरना' अथवा जिसमें उतरे। उतरने और चढ़न का व्यवहार एकदेशी अर्थात् एक स्थान पर रहने वाले पदार्थ में हो सकता है। सर्वत्र व्यापक में नहीं हो सकता। सर्वव्यापक का आना-जाना। चढ़ना उतरना सर्वथा असम्भव है। जो सब जगह है, वह कहाँ से आयेगा और कहाँ जायेगा।

राम – क्या, रावण, कंस, हिरण्यकशिपु आदि दुष्टों को मारने के लिए प्रभु का अवतार नहीं हुआ? और क्या भविष्य में दुष्टों के दमन के लिए प्रभु अवतार नहीं होगा? मैंने सुना हे कि जब धर्म की हानि होती है तब-तब अवतार होता है।

श्याम –प्रभु का अवतार न कभी हुआ है और न कभी होगा। समय-समय पर जो महान् पुरुष उत्पन्न हुए हैं, जिन्होंने दुष्टों का दमन किया या जनता को ठीक रास्ता दिखलाया है लोगों ने इन्हें तरह-तरह की उपाधियाँ प्रदान की हैं। किसी ने उन महापुरुषों को नबी माना, किसी ने प्रभु का बेटा माना। किसी ने प्रभु का अवतार माना, किसी ने उन्हें साक्षात् प्रभु माना। परन्तु वे सब के सब व्यक्ति थे। जरा विचारो तो सही, जो प्रभु बिना शरीर के शरीरधारी प्राणियों को मार नहीं सकता। आज भी संसार में असंख्य प्राणी पैदा हो रहे हैं, और मर रहे हैं। क्या प्रभु शरीर धारण करके उनकी उत्पत्ति और विनाश कर रहा है। प्रभु के एक ही भूकम्प से लाखों प्राणी मर जाते हैं। एक ही तूफान में नगर के नगर विध्वंस हो जाते हैं। एक ही प्लेग, हैजा, करोना आदि रोग में लाखों व्यक्तियों का संहार हो जाता है। भला यह क्या

बात हुई कि तुच्छ प्राणियों के मारने के लिए प्रभु अवतार लेता है। उनके सामने रावण कंस आदि क्या चीज़ है? जो प्रभु सृष्टि की उत्पत्ति, प्रलय और स्थिति बिना शरीर के करता है, उसके लिए यह कहना कि दुष्टों को मारने के लिए अवतार लेता है, सर्वथा हँसी और उसके घोर अपमान की बात है।

जब धर्म की हानि होती है तब तब प्रभु का अवतार होा है। यह कहन भी भूल से खाली नहीं। इसमें सन्देह नहं कि अवतार के मानने वाले प्रायः इसी बात को ज़्यादा कहा करते हैं। लेकिन यह बात उन्हीं के सिद्धान्त से खण्डित हो जाती है। देखो! अवतारवादी मुख्य दस अवतार मानते हैं और चार युग मानते हैं। सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग। सतयुग में चारों चरण धर्म के मानते हैं। त्रेता में तीन चरण धर्म के और एक चरण पाप का मानते हैं। द्वापर में दो चरण धर्म और दो चरण अधर्म के अर्थात् आधा पुण्य और आधा पाप मानते हैं। कलियुग में तीन चरण पाप के और एक चरण पुण्य का मानते हैं। अब जरा अवतारों के क्रम पर विचार करो। सतयुग में चार अवतार मानते हैं। त्रेता में तीन और द्वापर में दो मानते हैं, कलियुग में एक अवतार का होना मानते हैं जो निष्कलंक प्रभु के रूप से अन्त में प्रकट होगा। अब सोचने की बात यह है कि जब सतयुग में चारों चरण धर्म के हैं, अधर्म है ही नहीं तो चार अवतार किस प्रयोजन के लिये? त्रेता युग में जब धर्म के तीन चरण रहे, तो एक अवतार कम क्यों हो गया। जीन ही अवतर क्यों रह गये। द्वापर में जब आधा पुण्य और आधा पाप रहा तो अवतार दो ही क्यों रह गये। और कलियुग में जब एक ही चरण धर्म का रहा, तीन चरण अधर्म के हो गये तो अवतार एक ही क्यों रहा? वह भी कलियुग के अन्त में जाकर क्यों होगा? वह होगा कल्कि अवतार। होना तो यह चाहिये था, अधर्म की वृद्धि के साथ-साथ अवतारों की संख्य भी बढ़ती जाती, परन्तु हुआ यह कि ज्यों-ज्यों अधर्म संख्या में बढ़ता गया, त्यों त्यों अवतार कम होते गये। अब बताओ, धर्म की हानि के साथ अवतारों का सम्बन्ध क्या रह गया?

राम – उन्होंने बड़े-बड़े चमत्कार दिखाये, जो मनुष्य नहीं दिखा सकता। जैसे गोवर्धन पहाड़ को उंगली पर उठाना आदि इससे मानना पड़ता है कि वे लोग प्रभु के अवतार थे।

श्याम – प्रथम तो यह बात गलत है कि किसी ने उंगली पर पहाड़

उठाया । यदि इसे सही भी मान लें तो इसमें प्रभु या प्रभु के अवतार की कोई महत्ता प्रकट नहीं होती । तुम कहोगे क्यों ? इसलिए कि जो प्रभु सूर्य, नक्षत्र आदि ग्रहों और उपग्रहों के अपनी शक्ति से धारण किये हुए हैं उसके सामने गोवर्धन आदि पहाड़ राई के तुल भी तो नहीं हैं ।

जिस पृथ्वी पर हम तुम रहते हैं उस पर लाखों छोटे-बड़े पहाड़ हैं, उस पृथ्वी को ही प्रभु ने धारण किया हुआ है तो गोवर्धन पहाड़ बेचारा है किस गिनती में ? यदि प्रभु या प्रभु का अवतार होकर किसी ने गोवर्धन पहाड़ उठा भी लिया तो इसें कौन सी बहादुरी की बात हो गई ? अगर एम.ए. के किसी विद्यार्थी ने दूसरी या तीसरी श्रेणी का कोई सवाल हल कर दिया तो क्या उसने कोई तीर मार दिया ? हाँ दूसरी तीसरी श्रेणी का बालक होकर यदि एम.ए. का सवाल हल कर देता है तो वास्तव में उसकी प्रशंसा की बात है । इसी तरह व्यक्ति होकर यदि किसी ने पहाड़ उठा लिया होता, तो वास्तव में एक चमत्कार की बात कहलाती, क्योंकि व्यक्ति से यह आशा न थी, जो उसने करके दिखा दिया । लेकिन प्रभु का अवतार होकर जब पहाड़ उठाया तो न ता इसमें कोई चमत्कार है, और न इसमें उसकी कोई महानता है ।

राम – अगर तुम्हारे विचार में प्रभु का अवतार नहीं होगा, तो वह सर्वशक्तिमान कैसे माना जायेगा ? जब प्रभु होकर अवतार भी नहीं ले सकता, तो उसमें सर्व शक्तिमानपन रहा कहाँ ? शक्तिमान तो वही है जो सब कुछ कर सकता हो ।

श्याम – मित्र ! तुमने विचार नहीं किया ? प्रभु अवतार लेने से सर्वशक्तिमान रहता ही नहीं । अल्पशक्तिमान हो जाता है । यदि कहो कैसे, सुनो, जो प्रभु शरीर धारण करने से पहले बिना हाथों के कार्य कर रहा था, अब वह हाथों से कार्य करेगा । जो बिना नेत्रों के देख रहा था, अब नेत्रों से देखेगा । पहले बिना कानों से सुन रहा था अब कानों से सुनेगा । तात्पर्य यह है अवतार लेने के पूर्व अपने सारे कार्य बिना शरीर के कर रहा था, अब शरीर का मुहताज बन के काम करेगा ।

जब दूसरों का मुहताज बना तो सर्वशक्तिमान रहा कहाँ । जैसे अल्पज्ञ आत्मा अपने काम करने में शरीर का मुहताज है, वैसे ही परमात्मा भी शरीर

का मुहताज हो जायेगा। फिर व्यक्ति और प्रभु में अन्तर ही क्या रह जायेगा। जैसे व्यक्ति को भूख, प्यास, सर्दी-गर्मी सताती हे वैसे ही शरीरधारी प्रभु को भी सतायेगी। जैसे राग-द्वेष, ज्वर, पीड़ादि व्यक्ति में होती है, वैसे ही प्रभु में भी होगा। सबसे बड़ा दोष तो यह है—प्रभु अवतार लेते ही पराधीन हो जाते हैं, स्वाधीन रहते ही नहीं। कहीं उसे भोजन की आवश्यकता होती है, कहीं जल की और कहीं वस्त्रों की। कहीं रहने के स्थान की आवश्यकता होती है। समस्त काम अपनी शक्ति से करने वाला जब शरीर की सहायता से काम करने लगा, तो वह सर्वशक्तिमान माना ही कैसे जायेगा? यदि एक व्यक्ति दूसरे को अपने नेत्रों की आकर्षण शक्ति से बेहोश कर देता है और दूसरे व्यक्ति दवा खिलाकर बेहोश करता है, अब बताओ दोनों में शक्तिशाली कौन है? शक्तिशाली तो वह है जो नेत्रों की शक्ति से बेहोश करता है। क्यों? इसलिए कि वह दूसरे को बेहोश करने का मुहताज नहीं।

अब तुम अच्छी तरह समझ गये होंगे, प्रभु सर्वशक्तिमान तभी हो सकता है जब अवतार धारण न करे। तुम्हारा विचार है कि सर्वशक्तिमान सब कुछ कर सकता है सिवाय भ्रान्ति के और कुछ नहीं है। सर्वशक्तिमान शब्द का अर्थ तो यह है कि उसमें सर्वशक्तियाँ हैं। वह संसर के सूक्ष्म से सूक्ष्म पदार्थ को मिला सकता है, और पृथक कर सकता है। समस्त जीवों को कर्मानुसार फल दे सकता है, सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय कर सकता है,और उसको नियम से चला सकता है। तात्पर्य यह है कि परमात्म अपने काम करने में दूसरे का सहारा नहीं लेता यही प्रभु की सर्वशक्तिमान है। सर्वशक्तिमान का यह अर्थ कभी नहीं होता कि वह असम्भव को सम्भव कर सकता है। जैसे एक हिन्दी कवि के शब्दों में—

जन्म मरण से रहित है, निश्चय वह करतार।
नियमबद्ध वह प्रभु है लेता नहीं अवतार।।

राम— क्या प्रभु असम्भव को सम्भव नहीं कर सकता? यदि नहीं कर सकता तो वह प्रभु ही नहीं है।

श्याम — असम्भव को सम्भव न करना, प्रभु नियम को अनियम न करना ही प्रभु की प्रभुता है। यदि तुम समझते हो, कि प्रभु असम्भव को

सम्भव कर सकता है तो मैं पूछता हूँ, बताओ अपने को नष्ट कर सकता है या नहीं ? प्रभु अपने समान दूसरा प्रभु बना सकता है या नहीं ।

राम – प्रभु अपने को चाहे नष्ट करे, पर अपने समान दूसरा प्रभु अवश्य बना सकता है, जब कि वह सर्वशक्तिमान है ।

श्याम – नहीं मित्र ! प्रभु अपने समान दूसरा प्रभु नहीं बना सकता । तुम कहोगे क्यों ? अच्छा सुनो, कल्पना करो आज प्रभु ने दूसरा प्रभु बना लिया है । अब विचारना यह है, क्या बना हुआ प्रभु, प्रभु के समान हो गया ? हर्गिज नहीं । तुम कहोगे क्यों नहीं हुआ ? इसलिए नहीं हुआ, कि एक प्रभु तो पुराना रहा दूसरा नया रहा । एक अनादि रहा, दूसरा सादि रहा, दूसरे शब्दों में एक नया बना हुआ रहा, रहा दूसरा बेवना हुआ रहा । एक में आयु का सम्बन्ध नहीं क्योंकि वह नित्य है । दूसरे की आयु आज से आरम्भ हुई, क्योंकि वह बनाय गया है । प्रभु व्यापक रहा, बना हुआ प्रभु व्याप्य रहा, क्योंकि दोनों व्यापक तो हो ही नहीं सकते । यदि कहो आधे, आधे व्यापक हो गये तो दोनों सर्वव्यापक न रहे । जब सर्वव्यापक न रहे तो दोनों ही प्रभु न रहे । अतः सर्वशक्तिमान का यह अर्थ ही नहीं है कि प्रभु सब कुछ कर सकता है । प्रभु वही कर सकता है, जो प्रभु को करना चाहिए ।

राम – यदि प्रभु का अवतार मान लें तो इसमें हानि क्या होती है ?

श्याम – जब प्रभु का अवतार होता ही नहीं, फिर उसका मान लेना सत्य का गला घोंटना है । यही एक बड़ी हानि है । दूसरी हानि यह है कि सारे संसार की उन्नति करने वाला प्रभु अवनति को प्राप्त हो जाता है । क्यों ? इसलिए कि वह नारायण से नर बना है । नर से नारायण बनना उन्नति का सूचक कहा भी जा सकता है । परन्तु नारायण से नर बनना तो सरासर अपने पद से नीचे गिरना है । कोई रंक यदि राजा हो जाता है तो वास्तव में उसकी उन्नति हुई है । परन्तु राजा से रंक हो जाने को उन्नति का चिन्ह कौन माने सिवाय भोलों के ? तीसरी हानि यह है कि हर एक पाखण्डी अपने को प्रभु का अवतार कहने लगता है और भोले भाले स्त्री पुरुषों को अपने जाल में फँसा कर उनका धर्म कर्म नष्ट कर देता है । उन्हें चेले और चेलियाँ बनाकर उनसे धन लेकर खूब मौजें उड़ाता है । भारतवर्ष में ऐसे पाखण्डियों के उदाहरण

मौजूद हैं, जिन्होंने अपने अवतार घोषित किया और स्त्रियों तथा पुरुषों के धर्म और धन को खूब नष्ट किया। चौथी हानि अवतार को मानने से यह है कि लोग अत्याचार के सहने वाले हो जाते हैं।

जब दुष्ट और पापी अत्याचार करते हैं, बहन-बेटियों की इज्जत खराब करके सम्पत्ति लूट ले जाते हैं, मकानों और दुकानों में आग लगा देते हैं तो अवतारवादी हाथ पर हाथ धरे बैठ रहते हैं। वे अन्याय और अत्याचार का प्रतिकार (मुकाबला) नहीं करते। वे सोचते हैं, अन्याय अधर्म का रोकना हमारे वश की बात नहीं है। जब भगवान् अवतार धारण करेंगे, तभी दुष्टों का संहार होगा, तभी धर्म की स्थापना हो सकेगी, तभी पाप दूर होगा और तभी पृथ्वी का भार हल्क होगा। वास्तव में, यह एक महान् कायरता है, जो प्रभु का अवतार मानने के कारण ही लोगों में उत्पन्न हुई है। जिन जातियों में प्रभु को अवतार नहीं माना जाता वे जातियाँ अपने शत्रुओं से स्वयं कसकर बदला लेती हैं। वे कभी नहीं सोचती कि अन्यायी और अत्याचारियों को मारने के लिए प्रभु का अवतार होगा। वे समझती हैं, जैसे हाथ, पाँव भगवान् ने उन अत्याचारियों को दिये हैं वैसे ही हमें भी दिये हैं, इसलिए वे जातियाँ शत्रु से डटकर मुकाबिला करती हैं। वे अपना करने का काम प्रभु पर नहीं छोड़ती। मित्र राम मैं तुमसे सत्य कहता हूँ इस अवतार के सिद्धान्त ने आर्य जाति को बहुत पतित और पद दलित किया हैं इसने आत्मविश्वास को जाति से सर्वथा निर्वासित कर दिया है।

राम – मित्र, तुम्हारी युक्तियों प्रभाव तो मुझ पर बहुत पड़ा है, अब यह बताओ कि जब प्रभु निराकार है तो हम उसका ध्यान कैसे करें?

श्याम– प्रभुकृपा है जो तुम्हारे ऊपर सत्य सिद्धान्तों का प्रभाव पड़ा है जो प्रश्न अब तुमने किया है इस पर विचार फिर किया जाएगा।

5. प्रभु का ध्यान कैसे हो?

राम – लो दोस्त! मैं नियत समय पर आ गया, कल का प्रश्न हल करो। जब प्रभु निराकार है तो उसका ध्यान कैसे हो?

श्याम – ध्यान दो तरह का होता है, एक तो संसार के प्राणियों का और संसार के पदार्थों का ध्यान, दूसरा सर्वव्यापक, सर्वनियन्ता इन्द्रियों से परे परम प्रभु का ध्यान। संसार से सम्बन्ध रखने वाली वस्तुओं का ध्यान तो उन्हें देखकर अथवा उनके वियोग होने पर होता है। जैस एक भाई को मैंने चंडीगढ़ में देखा उससे परिचय हो गया। फिर 10 वर्ष के पश्चात् मैंने देहली में देखा। अब मुझे ध्यान आया कि यह वही भाई है, जो मुझे चंडीगढ़ में मिले थे। दूसरे वियोग होने पर ध्यान होता है–जैसे मेरे एक दोस्त जिससे मुझे अत्यन्त प्रेम है–कहीं बाहर भ्रमण करने चले गये। अब मुझे उनका बार-बार ध्यान आता है कि न जाने वे इस समय कहाँ होंगे? जब उन से वियोग हुआ तब उनका ध्यान आने लगा। यह तो रही सांसारिक वस्तुओं के ध्यान की बात।

प्रभु के ध्यान की बात इससे सर्वथा भिन्न है। प्रभु के ध्यान का अर्थ है–मन को निर्विष्य करना, अर्थात् मन और इन्द्रियाँ में फैली हुई आत्मा की शक्तियों को आत्मा में ही एकत्र करना। जब तक मन और इन्द्रियाँ संसार के विषयों की ओर लगी हुई हैं तब तक प्रभु का ध्यान आत्मा कर ही नहीं सकता। प्रभु का ध्यान करने के लिए यह परमावश्यक है कि मन और इन्द्रियों को अभ्यासपूर्वक विषयों की ओर जाने से रोका जाये। याद रखो! ध्यान योग के आठ अंगों में सातवां अंग है। पहले यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा इन छः अंगों का पालन करना आवश्यक है। तब कहीं जाकर व्यक्ति ध्यान का अधिकारी होगा। जब नियमानुसार छः अंगों का पालन हो जायेगा, तब ध्यान तो अपने आप लगने लगेगा। जब ध्यान छः अंगों के पश्चात् है तो मूर्ति के द्वारा पहले ही कैसे हो जायेगा?

राम – दोस्त मन बड़ा चंचल है, यह निराकार में लग कैसे सकता है? इसको लगाने के लिये साकार पदार्थ का सहारा चाहिये। बिना साकार पदार्थ

के मन में स्थिरता हो नहीं सकती ।

श्याम – प्यारे दोस्त ! मन तो स्थिर होता ही निराकार में है, साकार में तो स्थिर हो ही नहीं सकता । क्योंकि साकार पदार्थ शब्द, स्पर्श, रूप, रस आदि विषयों वाले होते हैं । इस कारण उन विषयों में फंसकर मन चंचल रहता है । यदि साकार पदार्थ में मन स्थिर होता, तो सारा संसार ही साकार है । सब का मन स्थिर हो गया होता । परन्तु ऐसा नहीं है । ज्यों-ज्यों सांसारिक पदार्थों में मन फंसता जाता है त्यों-त्यों मानसिक चंचलता और अधिक बढ़ती जाती है । यदि गहराई से विचार करो तो मालूम होगा कि मन स्थिर नहीं हुआ करता । मन का स्थिर होना तो मृत्यु है । मन या हृदय की गति के बन्द हो जाने का नाम ही तो मृत्यु है । मन टिका नहीं कि व्यक्ति मरा नहीं, वास्तव में मन की बाह्य वृत्तियों का अन्तर्मुखी हो जाना ही मानसिक स्थिरता है । जब तक व्यक्ति जीवित है उस का मन गतिशील ही रहेगा ।

राम – तो क्या जो लोग मूर्ति द्वारा प्रभु का ध्यान करते हैं, भूल में हैं । मेरा विचार तो यह है कि – मूर्ति द्वारा मन की चंचलता दूर हो सकती है । इसलिए व्यक्ति राम, कृष्ण आदि की मूर्तियाँ पूजते हैं ।

श्याम – मूर्ति के द्वारा प्रभु का ध्यान कभी भी नहीं हो सकता । मैं पहले कह चुका हूँ कि ध्यान का अर्थ है–मन का निर्विषय होना । मूर्ति में पाँचों विषय वर्तमान हैं । मोटे तौर पर देखें तो मूर्ति में रूप तो है ही । मेवा, मिष्ठान्न और दूध, जल जो चढ़ाया जाता है उसमें रस वर्तमान ही है । पुष्प जो चढ़ाये जाते हैं, उसमें गन्ध मौजूद ही है । घण्टा घड़ियाल जो बजाते हैं उसमें शब्द होना ही है । मूर्ति स्वयं भी पाँच तत्त्वों की बनी हुई है, जिनका धर्म शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध है । फिर मूर्ति में मन की चंचलता दूर होती तो जिस श्री कृष्ण की लोग मूर्ति बनाते हैं, वे श्री कृष्ण साक्षात् अर्जुन के सामने मौजूद थे परन्तु अर्जुन के मन की चंचलता दूर नहीं हुई । अर्जुन श्री कृष्ण महाराज से कहता है–

चंचल हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवदृढ़म् ।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ।। गीता 6.34

मन बड़ा चंचल हठीला और दृढ़ है। इसे रोकना वायु के वेग के समान अत्यन्त कठिन समझता हूँ।

यह सुनकर श्री कृष्ण जी ने उत्तर दिया–

असंशय महाबाहो मनोदुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते। गीता 6.35

हे अर्जुन! इसमें सन्देह नहीं कि मन बड़ा चंचल और हठीला है, परन्तु अभ्यास और वैराग्य से वह वश में हो सकता है। जब असली श्री कृष्ण की मूर्ति से उसका मन स्थिर नहीं हुआ कि वह रात-दिन उन्हें देखता था तो फिर नकली और जड़ पदार्थ से बनी हुई श्री कृष्ण की मूर्ति से मन कैसे स्थिर हो सकता है?

राम – तो क्या मूर्तिपूजा नहीं करनी चाहिये?

श्याम – मूर्तिपूजा करनी चाहिये परन्तु बेजान अर्थात् जड़ मूर्ति की पूजा जड़ की तरह और जानदार अर्थात् चेतन मूर्ति की पूजा चेतन की तरह करनी चाहिए।

राम – जड़ की पूजा जड़ की तरह और चेतन की पूजा चेतन की तरह करनी चाहिए। इसका मतलब क्या है? मैं समझा नहीं?

श्याम – पूजा शब्द के धातु सम्बन्धी और व्यावहारिक कई अर्थ हैं। जैसे पूजा का अर्थ है–सत्कार, आदर, पूजा का अर्थ है किसी चीज की उचित रक्षा, किसी को उचित दण्ड। अब सोचो, जड़ मूर्ति की पूजा का क्या अर्थ है। जड़ मूर्ति की पूजा का अर्थ है–उस मूर्ति को साफ-सुथरा रखा जाये। सुरक्षित स्थान पर हो ताकि टूटने, फूटने न पाये, मैली-कुचैली बेआब और बेकार न होने पावे। यहाँ उचित प्रयोग और उचित रक्षा ही जड मूर्ति की पूजा है। पूजा शब्द का अर्थ प्रत्येक पदार्थ को सिर झुकाना, पुष्प, पत्र, मेवा, मिष्ठान्न आदि चढ़ाना नहीं होता। जैसे किसी ने किसी से कहा कि यह जो महात्मा है, इनकी पेटपूजा कर दो। तो इसका अर्थ होगा यही कि, इनको भोजन करा दो। यह अर्थ नहीं होगा कि इनके पेट पर फूल पत्ते, पानी, मेवा और मिष्ठान्न चढ़ा दो। इसी प्रकार किसी ने किसी से कहा–यह गुण्डा जो ज्यादा बकवास कर

रहा है, इसकी पीठ पूजा कर दो, तब यह मानेगा। अब इसका क्या अर्थ होगा? यह होगा कि इसकी पीठ में दस-पाँच डण्डे लगा दो। यह अर्थ नहीं होगा, कि इसकी पीठ पर फल, फूल और मेवा मिष्ठान्न चढ़ा दो। यहाँ एक स्थान पर पूजा का अर्थ भोजन कराना है, दूसरे स्थान पर डण्डे लगाना है। बस इसी प्रकार जड़ मूर्ति की पूजा का अर्थ उसको सुरक्षित रखना होता है। उसके ऊपर सामग्री चढ़ाना और नमस्कार करना नहीं होता। क्योंकि उस बेजान मूर्ति में वह योग्यता नहीं है जो हमारी श्रद्धा भक्ति को समझ सके और मेवा मिष्ठान्न, फल, फूल आदि से लाभ उठा सकते हैं। उनकी पूजा फूल, फल, मेवा मिष्ठान्न आदि विविध प्रकार के पदार्थों से करनी ही चाहिए। यहाँ पूजा का अर्थ आदर या सत्कार माना जायेगा।

राम – जब प्रभु सब जगह हैं, तो मूर्ति में भी हैं, फिर क्यों न मूर्ति को पूजा जाये? पूजा करने वाले पत्थर को नहीं पूजते उसके व्यापक प्रभु को ही पूजते हैं।

श्याम – यह सत्य है कि प्रभु सर्वत्र होने के कारण मूर्ति में भी व्यापक है। परन्तु यह आवश्यक नहीं है, कि सब जगह होने पर सब जगहों में और सब चीजों में उसकी पूजा हो सकती है। देखो! पूजा करने वाला आत्मा है। इस का पूजा करने का उद्देश्य यह है कि प्रभुमिलन हो जाये। मेल वहाँ होता है जहाँ मिलने वाले दोनों विद्यमान हों। मूर्ति में प्रभु तो है पर वहाँ आत्मा तो है ही नहीं, जिसे प्रभुमिलन हो। फिर मिलाप हो तो कैसे? हर व्यकित के अपने हृदय में आत्मा और परमात्मा दोनों ही स्थित हैं। वहाँ दोनों का मेल अवश्य हो सकता है। इसलिए मुझे लिखना पड़ा–

कोई कहता यहाँ, कोई कहता वहाँ।
सारी दुनियाँ में ढूंढा, कहीं नहीं मिला।।
जब साधना में खुना चक्षु ज्ञान का।
मनमन्दिर में दर्शन हो भगवान् का।। –धर्मपाल कपूर

यदि व्यक्ति को प्रभु से मिलना है उसे अपने हृदय में ही मन के अन्दर इन्द्रियों को वश में करके प्रभुपूजा करनी चाहिये। देखो! प्रभु जब जगहों में

व्यापक है, यह जानकर भी क्या सब स्थानों पर जल पीने के योग्य होता है? प्रभु का वास शेर और साँप दोनों में है, मैं पूछता हूँ क्या शेर और साँप के पास जाना उचित होता है। इसलिये यह कहना कि प्रभु मूर्ति में भी व्यापक है, इसलिए मूर्तिपूजा करनी चाहिये, कोरी अज्ञानता और भोलेपन की बात है प्रभु मिश्री में है और विष में भी है, तो क्या विष को खाना चाहिये? हरगिज नहीं। खानी तो वही चीज चाहिये जो खाने योग्य है। मूर्तिपूजन करने वाले समढते तो यही है कि हम मूर्ति में व्यापक प्रभु की पूजा कर रहे हैं, परन्तु वास्तव में मूर्ति द्वारा व्यापक प्रभु की पूजा होती नहीं। तुम कहोगे क्यों? इसलिए कि जिन पदार्थों को मूर्ति पर चढ़ाया जाता है उनमें भी प्रभु व्यापक है। जैसे आकाश घड़े में भी व्यापक है और ईंट में भी। अब यदि कोई व्यक्ति यह चाहे कि घड़े में जो आकाश व्यापक है उसके ईंट मार दूं तो उसकी यह सर्वथा भूल होगी। क्योंकि व्यापक होने के कारण आकाश को ईंट लग नहीं सकती। यदि ईंट उठाकर मारेगा भी तो घड़ा ही टूटेगा आकश नहीं। क्योंकि आकाश तो उस ईंट में भी है। इसी प्रकार जो भी पुष्प, पत्र, मेवा, मिष्ठान्न मूर्ति में व्यापक प्रभु पर चढ़ाया जाता है, वह मूर्ति पर ही चढ़ना है। प्रभु पर नहीं। क्योंकि प्रभु तो उन पदार्थों में भी व्यापक है।

राम – मूर्ति पर फल, पुष्प आदि न चढ़ाये जायें परन्तु उसको श्रद्धापूर्वक देखने से व्यापक परमात्मा और उसकी महिमा का ज्ञान अवश्य हो जाता है।

श्याम – यह भी बिल्कुल उल्टी बात है। जरा सोचो तो सही कि मूर्ति को देखने से व्यापक परमात्मा और उसकी महिमा का ज्ञान कैसे हो जाता है? देखो! तिलों में तेल व्यापक है, परन्तु देखने वाले को क्या दिखाई देगा, तिल या तेल? तिल ही तो दिखाई देंगे। चाहे वह कितनी ही श्रद्धा व ध्यान से उसे क्यों न देखें? तेल कब दिखाई देगा, जब उन तिलों को तोड़ दिया जाये, कोल्हू में पेल दिया जाये। इसी प्रकार मूर्ति में प्रभु व्यापक है, परन्तु देखने वाले को मूर्ति ही दिखाई देगी प्रभु नहीं। प्रभु तो तभी दिखाई देगा, जब जड़ मूर्ति से नाता तोड़ दिया जाए और अपने आत्मा में उसकी खोज की जाये। रही प्रभु महिमा के ज्ञान होन की बात सो व्यक्ति की बनाई मूर्ति में प्रभु की महिमा क्यों

दिखाई देगी? उसमें तो व्यक्ति की ही महिमा दिखाई देगी कि उसने किस अक़्लमंदी से बनाया है। हाँ, प्रभु की बनाई हुई चीजों में प्रभु की महानता अवश्य दिखाई देगी। तुम्हें प्रभु की महानता देखनी है तो सारी सृष्टि का विचारपूर्वक अध्ययन करो, फिर देखो प्रभु की बनाई हुई छोटी से छोटी चीज में कितनी महानता प्रकट होती है। इन व्यक्तिकृत जड़ मूर्तियों में परमात्मा की महानता का कौन सा चिन्ह है जो प्रकट होगा?

राम – दोस्त, फल सदैवा भावना का होता है, मूर्ति को ईश्वर न मानते हुए भी हम उसमें ईश्वर की भावना करके फल प्राप्त कर सकते हैं। दूसरे, कोई व्यक्ति किसी स्थान पर एक दम ऊँचा नहीं चढ़ सकता, उसके लिए सीढ़ी (जीना) चाहिए। मैं मूर्तिपूजा को प्रभु की पहली सीढ़ी मानता हूँ। अतएव यदि कोई मनुष्य प्रभु की कल्पित मूर्तियाँ बनाकर पूजा करता है तो इसमें कोई दोष नहीं।

श्याम – तुम्हें याद रखना चाहिए, भावना किसी चीज की वास्तविकता को नहीं बदल सकती। कोई व्यक्ति अज्ञानवश चूने के पानी में दूध ककी भावना कर ले तो क्या उससे मक्खन निकाल सकता है? जल में अग्नि की भावना करने से क्या सर्दी से बच सकता है? पत्थर में रोटी की भावना करने से क्या पेट भर सकता है? यदि भावना करने से ही प्रत्येक चीज की प्राप्ति हो जाती है। तो संसार में न तो लोग दुःखी देखे जाते और न परिश्रम करते हुए सुखी देखे जाते। भावना तभी भावना है, जब वह सत्य पर आधारित हो, नहीं तो वह अभावना है। कोई व्यक्ति जुलाव की गोलियों में चूरन की भावना करके उन्हें खा जाये तो क्या उसे दस्त नहीं आयेंगे? जिस चीज का जो गुण हे, वह उससे कैसे दूर हो सकता है, इसलिए यह कहना कि भावना करके फल प्राप्त किया जा सकता है, सरासर अज्ञानता है।

देखो! सोमनाथ के मन्दिर के पुजारियों की जड़ मूर्ति भावना थी कि यह साक्षात् महादेव जी हैं। जब 1025 ई. में मुहम्मद गजनवी ने चढ़ाई की, तो पण्डे और पुजारी हाथ पर हाथ धरे बैठे रहे। कहने लगे सब मिलकर सोमनाथ जी का जप करो, ये स्वयं ही मलेछों का संहार कर देंगे। हमें लड़ने की कोई आवश्यकता नहीं है। इस भावना और विश्वास से जो परिणाम निकला,

इतिहास के पढ़ने वाले उसे अच्छी तरह जानते हैं । सोमनाथ ही क्यों ? इसी भावना से हज़ारों मन्दिर और मूर्तियाँ टूट गई । अरबों रुपयों की सम्पत्ति लुटेरे लूटकर विदेशों को ले गये । फिर भी लोगों की अन्धी भावना दूर नहीं हुई । कैसे आश्चर्य की बात है कि बेजान मूर्तियाँ जो कुछ भी नहीं कर सकती थीं उनमें तो लोगों ने कर सकने की भावना रखी और जो जानदार सब कुछ कर सकते थे उनमें न करने की भावना रखी । हमारे देश और जाति के पतन का यही तो मूल कारण हुआ । अब तुम समझ गये होंगे कि अज्ञानतापूर्ण भावना कितनी दुःखदायक होती है ।

तुम्हारा जो यह कहना है कि मूर्तिपूजा प्रभुप्राप्ति की प्रथम सीढ़ी है, यह बात भी बिल्कुल गलत है । हाँ, चेतन मूर्तियों की पूजा तो क्या फल प्राप्ति की प्रथम सीढ़ी किन्हीं अंगों में मानी जा सकती है, जड़ पदार्थ की पूजा कदापि नहीं । जड़मूर्ति हिमालय पहाड़ पर चढ़ने की सबसे पहली सीढ़ी मान ली जाये लेकिन प्रभुप्राप्ति की प्रथम सीढ़ी कैसे हो सकती है ? जब कि वह ज्ञान शून्य है । कोई हानि पहुँचे जी पढ़ना चाहे तो उसकी सीढ़ी—ए, बी, सी,डी आदि भक्त हैं । हिन्दी पढ़ना चाहे तो अ, आ, इ, ई आदि वर्ण पढ़ने होंगे । यदि कोई व्यक्ति ए, बी, सी, डी को प्रथम सीढ़ियाँ मानता है तो संस्कृत पढ़ना चाहे तो कैसे पढ़ सकता है ?

तुमने जो कहा—प्रभु की कल्पित मूर्तियाँ बनाकर पूजने में क्या दोष है ? दोष एक नहीं है अनेकों दोष हैं । पहला दोष तो यही है कि नकली चीज को असली जैसे गुण मानकर व्यक्ति स्वयं ही धोखा देता है पशु, पक्षी, कीट, पतंग भी अच्छी तरह जानते हैं कि कोई भी नकली चीज असली का काम दे नहीं सकती । किसी के सामने मिट्टी या रबड़ का चूहा बना के डाल दो वह भी उसके ऊपर नहीं झपटेगी । भ्रमर के सामने काग़ज़ के फूल बना के डालो, वह उन पर कभी आकर नहीं बैठेगा । इस प्रकार अन्य प्राणी नकली चीज से कभी प्रेम न करेंगे । परन्तु व्यक्ति जो संसार के प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ होने का दावा करता है नकली चीजों से यथेष्ठ फल पाने की आशा करता है । भला इससे बढ़कर आश्चर्य और क्या होगा ।

दूसरा दोष यह है कि प्रभु की कल्पित मूर्ति बनाने वाले अपनी जैसे

व्यक्ति भोजन की आवश्यकता अपने लिए समझता है वैसे ही प्रभु में समझकर भोग लगाता है, जैसे आप कपड़े पहनता है, वैसे ही प्रभु को पहिनाता है। जैसे आप नहाता है वैसे ही प्रभु को स्नान कराते हैं। जैसे आप सोता, जागता है वैसे ही प्रभु को भी सुलाया और जगाया जाता है और जैसे आप आभूषण पहिनाता है, वैसे ही प्रभु भी पहिनाता है। जब व्यक्ति अपनी जैसे आवश्यकतायें भी मानता है, तो उससे कल्याण की क्या आशा की जा सकती है। जो स्वयं ही जरूरतमंद है वह दूसरे की जरूरत को कैसे पूरा कर सकेगा? क्या अन्धा अन्धे को रास्ता दिखा सकता है? नहीं। तीसरा दोष यह है कि परमात्मा एक है और मूर्तियाँ अनेक हैं। क्योंकि प्रत्येक सम्प्रदाय ने अपने विश्वास के अनुसार प्रभु माना है। फलतः आपस में साम्प्रदायिक राग-द्वेष, लड़ाई-झगड़ा होता है जिससे राष्ट्रीय संगठन को बहुत बड़ा धक्का लगा ऐसे सैकड़ों दोष बनाये जा सकते हैं।

राम– तो तुम्हारा मतलब यह है कि मूर्ति को न भोग लगाना चाहिये न पूजा करनी चाहिये। मैं तो समझता हूँ शान्त राग और महान् पुरुषों के चित्र और मूर्ति देखने से मन को शान्ति मिलती है और प्रभाव भी पड़ता है।

श्याम – मेरा मतलब यह हर्गिज नहीं कि मूर्तियाँ और न बनाना चाहियें। मैं तो कहता हूँ, बनाने चाहिये। संसार के पुरुषों की मूर्तियाँ या चित्र बनाना उनकी यादगार को कायम रखना है परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि चेतन मनुष्यों की तरह उनकी पूजा करनी चाहिये या उनको परमात्मा या परमात्मा का प्रतिनिधि समझकर धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की याचना उनसे करनी चाहिये। बेजान चीज बेजान ही है, उनमें यह योग्यता कहाँ है कि वह जीवित व्यक्ति या प्रभु के स्थान में काम आ सके। जो पिता जीवित अवस्था में पुत्र से प्रेम कर सकता है मरने पर भी क्या वैसा ही प्रेम कर सकेगा? जिस शरीर से पिता ने पुत्र को गोद में लेकर खिलाया प्राण निकल जाने पर वही शरीर में और पत्थर की बनी हुई मूर्ति में क्या फर्क है? यही कि पत्थर या धातु की मूर्ति सड़ती नहीं, मृतक शरीर सड़ जाता है। अन्यथा और बातें एक जैसी ही हैं, उनकी पूजा का अर्थ भी यही है कि उनका ठीक प्रयोग किया जाये। यदि उनका प्रयोग न किया जायेगा तो वे ही पदार्थ मनुष्य को हानि

पहुँचायेंगे । यदि कहो कैसे ?

तो सुनो ! एक व्यक्ति गंगाजी की रात दिन पूजा करता है । फूल बताशे चढ़ाता है और गंगाजी का पाठ करता है । परन्तु वह तैरना नहीं जानता । एक रोज वह गहरे पानी में चला जाता है अब बताओ, गंगाजी डुबोयेगी या नहीं ? चाहे वह उसका कितना ही बड़ा भक्त क्यों न हो, तैरना न जानने के कारण गंगा फौरन डुबो देगी । एक दूसरा मनुष्य है जो गंगा को माता न मानकर एक नदी मानता है । हत्या करके आ रहा है खून से लथपथ है । गंगा में कूद पड़ता है लेकिन तैरना जानता है । बस फिर क्या है ? गंगा की छाती को चीर फौरन निकल जाता है । ऐसा क्यों हुआ ? इसलिए कि वह जल का ठीक प्रयोग करना जानता था जब कि पहला जल की गलत पूजा करता था । इसलिए गंगा ने पहले को डुबा दिया, दूसरे को बचा दिया । एक तो गंगा की पूजा करने वाले वे लोग हैं जो केवल स्नान में ही मुक्ति मानते हैं, प्रति वर्ष लाखों करोड़ों रुपये रेलव कम्पनियों को दे देते हैं । धक्के खा-खाकर दुःखी और परेशान होते हैं । उन्होंने गंगा की पूजा स्नान करना, सिर झुकाना और फल फूल चढ़ाना ही समझा है ।

दूसरे वे लोग हैं, जिन्होंने गंगा में नहरें निकाली फलतः करोड़ों रुपये सिंचाई से प्राप्त किये । गंगा से बिजली निकालीं और गंगा से चक्कियाँ पिसवाईं । वे लोग गंगा में स्नान करने कभी नहीं गये बल्कि नलों द्वारा उन्होंने अपने घर में ही गंगा को बुला लिया और सब तरह से लाभ उठाया । लाभ क्यों न उठाते ? जब उन्होंने जड़ पदार्थ की पूजा का अर्थ और उसका उचित प्रयोग करना समझा है । गंगा ही क्या ? प्रत्येक जड़ पदार्थ के विषय ऐसे अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं । रही मूर्ति को देखकर प्रभाव पड़ने की बात, इसके सम्बन्ध में भी जरा सोचो । अच्छा या बुरा प्रभाव मूर्ति देखने से नहीं पड़ता, परन्तु अपने आन्तरिक विचारों के कारण पड़ता है । जैसे एक हिन्दू ने राम या कृष्ण को देखा । वह उसके आगे श्रद्धा से सिर झुका देता है । क्यों झुकाता है ? इसलिये कि वह राम और कृष्ण का संस्कार जानता है । उसके हृदय पर संस्कार पड़ा हुआ है कि राम एवं कृष्ण एक परमात्मा के अवतार थे । उन्होंने रावण और कंस को मारा । संस्कार चाहे पुस्तकों के पढ़ने

से पड़ा हो, चाहे एक दूसरे से पड़ा हो, पड़ा अवश्य है। इसलिए उस मूर्ति को देखकर वह प्रभावित होता है।

लेकिन उसी हिन्दू के सामने अगर जप करने के लिए कन्फ्यूशिस की मूर्ति आ जाये तो उसे देख कर वह कभी प्रसन्न नहीं होगा, न उसमें उसके प्रति श्रद्धा उत्पन्न होगी। क्योंकि वह कन्फ्यूशिस के बारे में कुछ भी नहीं जानता। उसके हृदय पर उसका कोई संस्कार नहीं है इसलिए वह उसे सिर नहीं झुकाता। एक किसी भी हिन्दू देवी देवता की मूर्ति को देखकर श्रद्धा से झुकाता, इसका क्या कारण है? यही कि उस मुसलमान के प्रति उसका कोई संस्कार नहीं है उसे एक निर्बल तथा कुरुप मुसलमान का चित्र तो अच्छा लगता है, परन्तु हिन्दू देवी देवता की मूर्ति अथवा चित्र अच्छा नहीं लगता, न उसमें उसकी श्रद्धा होती है। मुसलमान का चित्र अच्छा क्यों लगता है? इसलिए कि उसके मन में इस्लाम का सहायक होने के संस्कार दृढ़ हो रहे हैं। अब तुम समझ गये होंगे कि जो भी प्रभाव पड़ता है, वह अपने संस्कारों के कारण पड़ता है, मूर्ति को देखने से नहीं। यदि मूर्ति को देखने से पड़ता तो प्रत्येक मनुष्य के मन पर प्रत्येक मूर्ति को देखने से पड़ता और उसे शान्ति मिलती। परन्तु ऐसा नहीं होता।

राम – जैसे स्कूल में नक्शे दिखाये जाते हैं, छोटे से नक्शे से सारे संसार का ज्ञान प्राप्त करा देते हैं। इसी प्रकार छोटी मूर्ति से विशाल परमात्मा का ज्ञान भी प्राप्त कराया जा सकता है?

श्याम – प्यारे दोस्त! नक्शा साकार जगत् का बनाया जाता है और उससे समुद्र, नदी, झील, पहाड़, नगर, कस्बा, सड़क, रेलें आदि का ज्ञान कराया जा सकता है। प्रभु सर्वव्यापक और निराकार है। अतः उसका नक्शा (मूर्ति) सम्भव नहीं है। न इससे प्रभु का ज्ञान हो सकता है।

राम – अक्षर और शब्द निराकार हैं परन्तु उनकी मूर्ति बनाकर बालकों को बोध कराया जाता है कि नहीं? यदि अक्षरों और शब्दों का आकार न बनाया जाये, तो लड़के कैसे विद्या प्राप्त कर सकें।

श्याम – अक्षर और शब्द आँख से नहीं देखे जाते, परन्तु कानों से सुने

जाते हैं । समझाने के लिए जो कान का विषय है, उसे नेत्रों का लोग बना देते हैं । लेकिन जो किसी इन्द्रिय का विषय न हो, उसे समझाने के लिए किस इन्द्रिय का विषय बनाया जाये ? किसी का भी नहीं । उसे तो केवल अनुभव द्वारा ही जाना जा सकता है और यह भी कोई आवश्यक नहीं कि निराकार अक्षरों और शब्दों के कल्पित चिन्ह ही बनाये जायें तभी विद्या प्राप्त हो सकती है यदि ऐसा होता तो अन्धे व्यक्ति तो पढ़े हुए मिलते ही नहीं क्योंकि उन्होंने न तो अ, आ, इ, ई का रूप देखा है, और न ए, बी, सी, डी का । लेकिन अन्धे व्यक्ति बड़े-बड़े अंग्रेजी तथा संस्कृत आदि भाषाओं के विद्वान् मिलते हैं । दूसरे लिखे हुए कल्पित चिन्ह वर्ण कहलाते हैं, अक्षर नहीं । जो बोला जाता है वह अक्षर है और निराकार है और जो लिखा जाता है वर्ण है और साकार है ।

राम – अच्छा ! समय निराकार है, परन्तु उसकी मूर्ति घड़ी के रूप में बनाकर काम निकालते हैं या नहीं ?

श्याम – घड़ी समय की मूर्ति नहीं है, सूर्य की मूर्ति है, सूर्य से समय का ज्ञान होता है । वैसे ही घड़ी से समय का ज्ञान होता है । घड़ियों का सारा काम सूर्य पर निर्भर करता है ।

राम – निराकार का ध्यान करें तो कैसे करें ? यदि सामने हो तो उस का ध्यान भी होता रहे । निराकार का ध्यान लगाने बैठे, आँखें मींचली, अब चीज कोई सामने नहीं तो मन लगेगा भी नहीं ।

श्याम – जगत् दो प्रकार का है–एक आध्यात्मिक और दूसरा भौतिक । आध्यात्मिक का अर्थ है आत्मा सम्बन्धी । याद रखो ! प्रभु सम्बन्धी विचार आध्यात्मिक जगत् में सम्बन्धित है । जब ध्यान करने बैठे, और मूर्ति का आकर ही मन और मस्तिष्क घुमाते रहें तो फिर आध्यात्मिक सम्बन्धी चिह्न कहाँ हुआ ? वह तो भौतिक अर्थात् भूत सम्बन्धी हुआ, क्योंकि सृष्टि पंच भूतों से बनी है । आध्यात्मिक ध्यान तो तभी बनेगा, जब साकार की सारी मूर्तियों का ध्यान छोड़कर आत्मा में ही परमात्मा की व्यापकता का अनुभव करोगे । परमात्मा और आत्मा देश काल की दूरी नहीं, केवल ज्ञान की दूरी है । अज्ञान का पर्दा हटते ही परमात्मा का अनुभव होने लगता है । जिस काम का

भी अभ्यास करोगे तो उसमें मन लगेगा ।

संसार में अभ्यास से सारे काम सिद्ध हो जाते हैं । बहुत सी स्त्रियाँ पानी के दो तीन घड़े सिर पर रखकर और गोद में बच्चे को लेकर आपस में बातचीत करती हुई ऊबड़-खाबड़ भूमि पर चली जाती हैं । क्या मजाल जो एक बूंद भी पानी गिर जाये । एक नट लम्बे बाँस पर कई-कई घंटे और दोनों हाथों पर दो-दो लड़के लिये हुए चढ़ जाता है । सरकसों में तार पर साईकिलें लड़कियाँ चलाती हैं । कुत्ते बिल्ली तक भी तोप और बन्दूक चलाते हुए देखे जाते हैं । यह सब अभ्यास का ही तो परिणाम है । दुबले-पतले व्यक्ति चार बजे उठकर ठण्ड में गंगा, यमुना नहाने चले जाते हैं और बड़े-बड़े तगड़े और तन्दुरुस्त चार बजे रजाई से मुँह खोलते हुए भी घबराते हैं । क्यों? जिन्होंने नहाने का अभ्यास डाला हुआ है, उनके लिए जाड़ा गर्मी सब एक समान है । इसी प्रकार जिन्होंने प्रभु के चिन्तन का अभ्यास डाला हुआ है, यम-नियम आदि की साधना द्वारा वे घण्टों नदी, पर्वतों और एकान्त स्थान में बैठे चिन्तन करते हैं । जो लोग समाधि लगाते हैं वे कई-कई घंटों तक ध्यान करते रहते हैं । क्या वे लोग किसी मूर्ति का ध्यान करते हैं । हरगिज नहीं । गहराई से सोचो, तो मूर्ति में मन लगता ही नहीं, क्योंकि कभी नाक का ध्यान होगा, कभी आँख का, कभी हाथ-पैरों का, मन अंगों में ही चक्कर काटता रहा । मन के आग जब कोई मूर्ति नहीं होगी तभी उसकी वृत्तियें आत्मा की ओर लगेंगी ।

राम – हलवाई की दुकान से चार आने के पेड़े लाता हूँ, जिन्हें खाकर स्वाद आता है । पेड़ा साकार है और स्वाद निराकार है । हलवाई से कहा जाये, पेड़े का स्वाद दे दो जो निराकार है तो कैसे दे देगा? इससे पता चलता है कि साकार मूर्ति से ही निराकार परमात्मा का आनन्द आ सकता है?

श्याम – दोस्त देखो! जो जिसका गुण है, खाने पर वह तो प्रतीत होगा । पेड़ा खाने से पेड़े का स्वाद आयेगा, लड्डू खाने पर लड्डू का आयेगा । पेड़ा और स्वाद में गुण-गुणी का सम्बन्ध है, न कि व्याप्य और व्यापक का । पेड़ा द्रव्य है स्वाद उसका गुण है । परन्तु मूर्ति और परमात्मा दोनों द्रव्य हैं । पेड़ा खाने से तो उसका गुण स्वाद प्रतीत हो जायेगा, परन्तु मूर्ति से परमात्मा का आनन्द कैसे प्रतीत होग, जब कि मूर्ति का परमात्मा गुण

नहीं है । दूसरे—पेड़ा खाने पर ही पेड़े का स्वाद आता है । कोई व्यक्ति मिट्टी का नकली पेड़ा बनाकर खाने लगे तो क्या स्वाद आ जायेगा? हरगिज नहीं । इसी प्रकार परमात्मा का अनुभव करने पर ही परमात्मा का आनन्द आ सकता है, परमात्मा के स्थान पर नकली मिट्टी-पत्थर के परमात्मा की मूर्ति बनाने पर परमात्मा का आनन्द कैसे आ जायेगा ।

राम – जिस तरह राजा की मूर्ति के कारण नोटों, रुपयों के व्यवहार सुखदायक है इसी प्रकार मूर्तिपूजा सुखदायक है ।

श्याम – प्रथम तो राजा शरीरधारी है उसकी मूर्ति नोट और रुपयों पर बन सकती है, परमात्मा निराकार है उसकी मूर्ति नहीं हो सकती । दूसरे नोट और रुपये राजा की आज्ञा से राजा के खजाने में बने हुए सुखदायक हैं, यदि कोई व्यक्ति राजा की आज्ञा के विरुद्ध जाली सिक्का अपने घर में बनाने लगे, तो जेल की हवा बगैर न रहे । इसी प्रकार परमात्मा की बनाई हुई मूर्तियों को योग्य व्यवहार ही सुखदायक है, परमात्मा को आज्ञा के बिना परमात्मा के स्थान में मिट्टी पत्थर की जाली मूर्तियाँ बनाना और पूजा करना अनेक योनि रूप जेलखानों में जाने का प्रयत्न करता है ।

राम – महाभारत में आता है—एकलव्य ने द्रोणाचार्य की मूर्ति बनाकर शस्त्र विद्या सीखी थी ।

श्याम – द्रोणाचार्य की मूर्ति थी तब एकलव्य ने प्रतिमूर्ति बनाई उसने परमात्मा के स्थान में उसकी पूजा नहीं की । दूसरे शस्त्र विद्या मूर्ति ने नहीं सिखलाई, यदि मूर्ति ही सिखाती तो उसे अभ्यास करने की क्या आवश्यकता थी । उसने सारी शस्त्र विद्या अभ्यास से सीखी । द्रोणाचार्य को इस बात का पता भी नहीं था । जब पता चला तो मूर्ति बनाने का फल, अपना अंगूठा काट कर मिला । मूर्ति में यह योग्यता कहाँ है, कि वह किसी काम को सिखा सके । यदि सिखा सके तो व्यास जी की मूर्ति रखकर प्रत्येक को उससे वेद पढ़ लेना चाहिए । कुबेर की मूर्ति से प्रत्येक को धन प्राप्त कर लेना चाहिए । जड़ मूति से सिवाय जड़ता के और कोई मिल भी क्या सकता है? एक बैरा अंग्रेज़ को नौकरी करके अंग्रेज़ी बोलना सीख जाता है । हलवाई की नौकरी करने वाला

मिठाई बनाना सीख जाता है। अग्नि के पास बैठने से गर्मी महसूस होती है, जिसकी संगति की जायेगी उसका गुण अपने अन्दर आयेगा। जड़ मूर्तियों के संगति से जड़ता आई लोग पिटे, मन्दिर टूटे, देश में भयंकर गुलामी और ग़रीबी आई। जड़ की संगति से आत्मविश्वास और कर्मण्यता नष्ट हुई।

राम – अच्छा, इस पर तो काफी विचार हो चुका है, अब यह बताओ, परमात्मा दयालु और न्यायकारी है या नहीं? यदि है, तो दया और न्याय दोनों एक साथ कैसे रह सकते है? क्योंकि जब दया करेगा तो न्याय नष्ट हो जायेगा और न्याय करेगा तो दया नष्ट हो जायेगी।

श्याम – इस पर विचार फिर होगा।

6. ईश्वर न्यायी है या दयालु?

श्याम – आपका प्रश्न था दया और न्याय दोनों गुण प्रभु में साथ-साथ कैसे रह सकते हैं। वास्तव में दया और न्याय दोनों साथ-साथ ही रहते हैं? अन्तर केवल यह है कि दया दयालु प्रभु अपनी ओर से करता है और न्याय वह जीवों के कर्म के अनुसार करता है। जैसे किसान ने खेत में दाना बोया, उस एक दाने के स्थान पर सैक्ड़ों दाने प्रभु ने उसे दिये। यह उसकी दया है अब न्याय उसका यह है जैसा आप ने बोया, वैसा ही काटोगे। जैसा करोगे वैसा ही भरोगे। चना बोकर चना प्राप्त हो सकता है, गेहूँ नहीं। यही उस का न्याय है। एक पिता के चार पुत्र हैं। चारों को उस ने एक हज़ार रुपया दिया। यह उस की पुत्रों पर दया है। परन्तु यदि कोई दूसरे पुत्र से रुपये जबरदस्ती छीन लेता है, तो पिता रुपये छीनने वाले पुत्र को दण्ड देता है। यह उस का न्याय है। रुपयों का देना पिता का और अपनी ओर से है इसलिए वह दया है। और दुष्ट पुत्र को दण्ड देकर अधिकारी को उस का अधिकार दिलाना पिता का न्याय है।

एक राजा डाकू को प्राण दण्ड देता है यह उसका न्याय है। प्राण दण्ड देकर डाकू द्वारा पीड़ित व्यक्ति की वह रक्षा करता है। यही उसकी दया है। यदि राजा डाकू को छोड़ देता है तो यह उसका अन्याय है। वास्तव में जो मतलब दया से निकलता है वही न्याय से निकलता है। जहाँ न्यय न हो वहीं दया कैसे हो सकती है। क्या अन्यायी व्यक्ति भी कभी दयालु हो सकता है? अन्यायी अन्यायी होता है दयालु नहीं। प्रभु न्यायकारी होने से ही उसने जीवों के कल्याण के लिए सृष्टि बनाई, यह उसकी पूर्ण सृष्टि है। कर्मानुसार प्रत्येक प्राणी को फल दे रहा है, यही उसका न्याय है।

राम – जब कोई व्यक्ति बुरा कर्म करता है, ते उस को प्रभु जानता है या नहीं? यदि जानता है तो उसे तत्काल क्यों नहीं रोक देता?

श्याम – प्रभु प्रत्येक को बुरे कर्म में तत्काल ही रोकता है। इस का सबूत यह है, कि जब व्यक्ति बुरा कर्म करने को उद्यत होता है तो उसके अन्तःकरण में उसी समय भय, लज्जा, शंका के भाव उत्पन्न होते हैं और अच्छा कर्म करता है तो हृदय में उसी समय आनन्द, उत्साह उत्पन्न होता है।

यह सब प्रभु की ओर से होता है। इसी को अन्तःकरण की आवाज़ कहते हैं। व्यक्ति ही नहीं पशुओं तक के अन्तःकरण में बुरा कर्म करने पर भय, लज्जा, शोक उत्पन्न होता है। कुत्ते को जब रोटी का टुकड़ा डाला जाता है तो वह उसी जगह उस टुकड़े को आनन्दपूर्वक खाता रहता है, और पूंछ हिलाता जाता है। वही कुत्ता जब रोटियाँ चुराकर भागता है तब न पूँछ हिलाता है और न खुलकर खाता है। बल्कि छिप कर के खाता है, क्यों? इसलिए कि वह जानता है, यह पाप है, चोरी है। इससे सिद्ध हुआ कि प्रभु बुरे कर्म करने से प्रत्येक प्राणी को उसी वक़्त रोकता है। हाँ, इतनी बात अवश्य है कि परमात्मा किसी जीव के कर्म करने की स्वतन्त्रता को नहीं छीनता। स्वतन्त्रता छीन भी कैसे सकता है, जीव अनादि है, और कर्म करने में स्वतन्त्र है?

दूसरे यदि प्रभु जीवों की स्वतन्त्रता छीन भी ले तो वे जीव न तो जीव ही रहेंगे और न उनकी उन्नति ही हो सकेगी। जैसे यदि किसी स्कूल में लड़कों की पढ़ाई हो रही है, अध्यापक लड़कों पर निगरानी रख रहा है कि कोई लड़का किसी का प्रश्न न देख ले। कई लड़के उत्तर गलत भी लिख रहे हैं। अध्यापक गलत उत्तर लिखते हुए भी देख रहा है। परन्तु वह उस समय लड़कों को रोकता नहीं, लिखने देता है। वह उनकी स्वतन्त्रता में बाधा नहीं डालता। यदि अध्यापक सारे बच्चों को सही उत्तर लिखा दे, तो इसमें बच्चां की व्यक्तिगत उन्नति क्या हो सकती है? उसको पढ़ाकर परीक्षा लेने का अर्थ ही क्या निकल सकता है? ऐसी अवस्था में वे विद्यार्थी विद्यार्थी न रहेंगे। बल्कि मशीन के पुर्जे जैसे बन जायेंगे।

अध्यापक का काम तो लड़कों को अच्छी तरह से पढ़ा देना है, पढ़कर प्रश्नों का सही उत्तर लिखना लड़कों का अपना काम है। इसी प्रकार प्रभु का काम तो जीवों को वेद द्वारा विधि-निषेध के कर्मों का ज्ञान प्राप्त करा देना है। कर्म तो जीव स्वतन्त्रता से ही करेंगे। यदि ज्ञान के अनुकूल कर्म करेंगे तो सुख प्राप्त करेंगे और अज्ञान के अनुकूल करेंगे तो दुःख प्राप्त करेंगे। वेद ज्ञान के अतिरिक्त प्रत्येक प्राणी के अन्तःकरण में भी बुरा कर्म न करने का आदेश प्रभु की ओर से अवश्य होता है। उस आदेश का बुरे कर्मों से रोकना इसी को कहा जाता है। जीवों के कर्म करने की स्वतन्त्रता छीन लेना रोकना नहीं है।

राम – अच्छा प्रभु, कर्मों का फल तत्काल क्यों नहीं देता ?

श्याम – प्रत्येक कर्म का उसी समय फल देना बन भी कैसे सकता है ? कल्पना करो कि प्रभु ने किसी व्यक्ति के कर्म पर प्रसन्न होकर उसे तत्काल फल दिया कि यह व्यक्ति एक वर्ष तक आनन्द भोगेगा । अब दूसरे दिन उसने बुरा कर्म किया उस का प्रभु ने फल दिया कि एक वर्ष दुःख भोगेगा । अब सोचो, यदि यह व्यकित एक वर्ष तक आनन्द भोगता है तब तो उसने पहले कर्म का फल प्राप्त कर लिया और प्रभु का नियम भी पूर्ण हो गया । अब इस वर्ष के बीच में चाहे वह कितने ही बुरे कर्म करे, उसका फल इस वर्ष नहीं मिलना चाहिये । यदि इसी वर्ष बुरे कर्म का भी फल मिलता है, तो पहले कर्म की एक वर्ष की आनन्द भोगने की आज्ञा प्रभु की टूट गई । जब जीव कर्म करने में स्वतन्त्र हो और कभी बुरे कर्म करेगा और कभी अच्छे कर्म करेगा ही । यदि प्रभु सब का तत्काल फल देता रहे, तो न तो बुरे कर्मों के फल की व्यवस्था बन सकेगी और न भले कर्मों के फल की व्यवस्था बन सकेगी । क्योंकि किसी भी कर्म के फल का समय पूर्ण न हो सकेगा । प्रभु प्रत्येक कर्म का फल अपनी नियमित व्यवस्था के अनुसार ही देता है ।

राम – यह संसार में जो लाखों योनियाँ हैं । क्या कर्म के फल से ही प्राप्त होती हैं ?

श्याम – दुनियाँ में दो प्रकार की योनियाँ हैं–भोग योनि और उभय योनि । यह सब जीवों को कर्मानुसार ही प्राप्त हुई है ।

राम – भोग योनि और उभय योनि से क्या तात्पर्य है ?

श्याम – भोग योनि वह है जिसमें जीव सुख-दुःख भोगते हैं परन्तु भविष्य के लिए कोई कर्म नहीं करते जैसे पशु-पक्षी आदि । उभय योनि मानव योनि है । इसमें मनुष्य सुख-दुःख रूप फल को भोगते हैं और भविष्य के लिए अच्छे बुरे कर्म भी करते हैं ।

राम – मानव को उभय योनि में क्यों माना गया है ?

श्याम – पशु-पक्षियों को केवल खाने की चिन्ता रहती है । पदार्थों के उत्पन्न करने की नहीं । उन का जन्म प्रभु की व्यवस्था के अनुसार केवल भोग

भोगने को ही है, कमाने का नहीं । देखो ! गेहूँ, चना, जौ आदि अनाज सब पशु-पक्षी खाते हैं, परन्तु वे उत्पन्न नहीं कर सकते क्योंकि उनमें विचार-शक्ति नहीं है । परन्तु मानव अपनी विचार शक्ति के आधार पर पशुओं से काम लेकर अनाज उत्पन्न कर सकता है । विचारशक्ति होने के कारण ही इसे उभययोनि कहा गया है । यह पदार्थों का भोग भी करता है और उन्हें उत्पन्न भी करता है । अपनी विचारशक्ति के सहारे मानव सारे पक्षियों को अपने काबू में कर लेता है । एक गडरिये के अधीन हज़ारों भेडें रहती हैं । एक ग्वाले के अधीन हजारों गायें रहती हैं । व्यक्ति शेर और बड़े-बड़े खूंखार जानवरों को सरकस में नाच नचा देता है ।

जानवरों से ही क्या अपनी विचारशक्ति के कारण पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु आदि तत्त्वों से भी मनमाना काम ले लेता है । प्रभु ने व्यक्ति को पक्षियां जैसे पर नहीं दिये जो उड़ सकें परन्तु इसने हवाई जहाज बना लिये । पानी में चलने के लिए मछली, कछुओं जैसे शारीरिक साधन नहीं दिये, लेकिन इसने पानी के जहाज तैयार कर लिये । गृद्ध और उकाब जैसी दूर की चीज़ देखने वाली आँखें नहीं दी, परन्तु इसने दूरबीन और खूर्दबीन का निर्माण कर लिया । क्या बात है ? यही कि व्यक्ति में विचारशक्ति है । इसलिये यह उभय योनि है । यह पूर्व जन्म के कर्मों का फल भोगता है और भविष्य के लिये कर्म भी करता है ।

राम – क्या जितनी योनियाँ प्राप्त होती हैं कर्मानुसार ही होती हैं और क्या व्यक्ति का जीव पशु-पक्षी आदि योनियों में भी जाता है ?

श्याम – हाँ, सारी योनियाँ स्व कर्मानुसार ही प्राप्त होती हैं । जीव सारी योनियों में आता जाता रहता है । मानव योनि में किये गये कर्म ही पाप-पुण्य से सम्बन्ध रखते हैं क्योंकि मैं बता चुका हूँ कि मनुष्य में ही विचारशक्ति है । जब यह विचारशक्ति का दुरुपयोग करता है, तो पापी बनकर अनेक योनियों में भ्रमण करता है । प्रभु अपनी न्यायव्यवस्था के अनुसार प्रत्येक जीव को उसके सुधार के लिये ही योनिया प्रदान करता है, व्यक्ति जो भी अच्छे बुरे कर्म करता है, उसके संस्कार सूक्ष्म शरीर पर पड़ते हैं । यही अच्छे बुरे संस्कार उसे उत्कृष्ट-निकृष्ट योनियाँ प्राप्त कराते हैं ।

राम – मानव योनि कैसे प्राप्त होती है और मुक्ति कब प्राप्त होती है?

श्याम – जब पाप की अपेक्षा पुण्य के संस्कार उत्कृष्ठ होते हैं तब मानव योनि प्राप्त होती है और जब निष्पाप कर्मों के संस्कार की प्रबलता होती है और ज्ञान हो जाता है, तो मरने पर मुक्ति प्राप्त हो जाती है। दूसरे शब्दों में जीव सांसारिक दुःखों से छूटकर परमानन्द को प्राप्त हो जाता है।

राम – हाथी का जीव चींटी में कैसे समाता होगा? क्यों बड़े शरीर के लिए बड़ा जीव और छोटे शरीर के लिए छोटा जीव होता है?

श्याम – जीव छोटे बड़े नहीं होते, जीव सारे प्राणियों में एक जैसे हैं। शरीरों में छोटा बड़ापन या भिन्नता होती है। जैसे ही इंजन में बहुत सी मशीनें लगी हुई हैं। कोई मशीन काटती है तो कोई छांटती है, कोई छापती है, इंजन सब को एक ही प्रकार की शक्ति दे रहा है, परन्तु मशीनों के पुर्जों में भिन्नता होने के कारण काम भिन्न-भिन्न प्रकार के हो रहे हैं। देखो! जहाँ किसी प्राणी को व्यक्ति की तरह होंठ मिले हैं, वहाँ दूध चूसता है, जहाँ चोंच मिली है वहाँ ठोंगे मारता है। एक खिलाड़ी जब मुर्गे का चोगा पहिन कर मार सकता है तो फिर जीव में भेद कहाँ रहा? शरीरों में ही भेद हुआ?

राम – क्या जन्म कर्मानुसार होता है? यदि होता है तो जन्म के पहले कर्म कैसा? जब बिना शरीर कर्म नहीं हो सकता तो जीव के संग जब शरीर नहीं था तो उसने कर्म किया कैसे? और जन्म रूप बन्धन में फंसा कैसे?

श्याम – जन्म तो अज्ञानता से होता है और योनियाँ कर्म अनुसार प्राप्त होती है। जैसे पहले स्कूल में लड़के का दाखिल होना अविद्या के कारण है और श्रेणियाँ प्राप्त करना कर्म या योग्यता के आधार पर है, इसी प्रकार संसार रूपी स्कूल में जीव का आना अर्थात् प्रथम शरीर धारण करना अल्पज्ञा के कारण है और अनेक श्रेणियाँ रूपी योनियों को प्राप्त करना कर्मानुसार है। दूसरे जीव का एक ही जन्म नहीं, अन्त बार शरीर से संयोग हुआ है और होता रहेगा। अनेक जन्मों के आत्मा पर संस्कार होते हैं। यदि कहो सृष्टि के आदि में कौन से कर्मों के संस्कार थे तो उत्तर यह है कि सृष्टि के आदि में उससे पूर्व सृष्अि के संस्कार थे। सृष्टि प्रवाह से अनादि है, दिन और रात की तरह निरन्तर चक्र चला आता है और चला जायेगा।

राम – कुछ व्यक्तियों का कहना है कि छोटे-छोटे प्राणियों में विकास होकर व्यक्ति का शरीर बना है। मानव सृष्टि का अन्तिम विकास है।

श्याम – प्यारे दोस्त! यह बात गलत है। यदि ऐसा होता तो व्यक्ति की उपस्थिति में अन्य प्राणियों का अभाव होना चाहिए था, परन्तु देखा यह जाता है कि व्यकित भी मौजूद है और अन्य छोटे बड़े प्राणी भी मौजूद हैं। फिर कैसे माना जाये कि प्राणियों का विकास होते-होते व्यक्ति का विकास हुआ है। जब अंकुर में विकास होकर वृक्ष बन जाता है और अंकुर कहाँ रहता है? कली में विकास होकर जब फूल बन जाता है तब कली कहाँ रहती है? दूसरी बात विचारणीय यह है कि व्यक्ति के अतिरिक्त जो भी प्राणी हैं, उन सब में सामान्य ज्ञान है परन्तु विशेष ज्ञान व्यक्ति में ही पाया जाता है। व्यक्ति में विशेष ज्ञान कहाँ से हुआ? विचारशक्ति से।

यह विचारशक्ति अन्य प्राणियों में नहीं पाई जाती। यदि पशु-पक्षी आदि में विचारशक्ति होती तो व्यक्ति उन पर शासन नहीं कर सकता था। देखो! यह बात मानी हुई है कि अभाव से भाव कभी नहीं होता। यदि व्यक्ति अन्य प्राणियों का विकसित रूप होता तो अन्य प्राणियों में विचारशक्ति पाई जाती, परन्तु ऐसा नहीं है। विकासवाद कहता है कि अन्दर से व्यक्ति का विकास हुआ है। यदि ऐसा होता तो व्यक्ति का बच्चा पानी में डाल देने से डूब नहीं सकता था। जब बन्दर से व्यक्ति बना है तो बन्दर की सारी शक्तियाँ व्यक्ति में विकसित होनी चाहिये। परन्तु ऐसा नहीं है। बन्दर के बच्चे को पानी में डाल दें तो फौरन तैर कर निकल जायेगा। परन्तु व्यक्ति का बच्चा तैरना न जानने के कारा डूब जायेगा। इससे सिद्ध है कि व्यक्ति, पशु, पक्षी आदि जितनी भी योनियाँ हैं सबका निर्माण अपनी न्याय व्यवस्था व कर्मानुसार प्रभु करता है।

5. श्राद्ध करना चाहिए या नहीं?

राम – दोस्त! आज यह बताओ, श्राद्ध करना चाहिये या नहीं?

श्याम – श्राद्ध करना चहिये। जीवित माता-पिता, दादा-दादी, नाना-नानी, गुरु, आचार्य आदि अत्यन्त श्रद्धापूर्वक सेवा करनी चाहिये, इसी का नाम श्राद्ध है।

राम – श्राद्ध तो मरे हुए पितरों का होता है, जीवित का भी कहीं श्राद्ध होता है?

श्याम – पहले यह सोचो पितर शब्द का अर्थ क्या है पितर का अर्थ है रक्षा करने वाला। रक्षा तो वही कर सकता जो जीवित हो। जीवित ही अपनी सन्तानों को उपदेश दे सकते हैं और अपने जीवन के अनुभव द्वारा संसार के व्यवहारों का ज्ञान करा सकते हैं। जीवित ही स्व सन्तानों की सब प्रकार रक्षा कर सकते हैं, मरने पर तो पितर-पितर ही नहीं रहता, पितर न तो आत्मा है, और न शरीर है। आत्मा और शरीर के संयोग विशेष का नाम जीवन है। जब मृत्यु ने दोनों का सम्बन्ध छुड़ा दिया तो पितर रह कहाँ गया? यदि आत्मा का नाम पितर हो तो आत्मा नित्य और अविनाशी न रहेगा, नाशवान् हो जायेगा। पितर मानने पर उसमें आयु का और छोटे बड़े का भेद मानना पड़ेगा। एक आत्मा की उत्पत्ति पहले, माननी होगी, दूसरे आत्मा की उत्पत्ति पश्चात् माननी होगी। यदि ऐसा न मानोगे तो पितर शब्द का आत्माओं से सम्बन्ध ही न जुड़ेगा। जब सम्बन्ध ही न जुड़ेगा, तो श्राद्ध किया किस का जायेगा। फिर आत्मा को तो सभी लोग अविनाशी मानते हैं, अतः उसमें आयु का और छोटे बड़े का भेद ही नहीं हो सकता। रहा शरीर, उस को भी पितर नहीं कह सकते।

प्रथम तो आत्मा के निकलते ही शरीर को शव कहा जाता है। दूसरे यदि शरीर पितर होता भी तो उसे दबाने या जलाने वाले को भारी पाप लगता। क्योंकि मरने पर या तो शरीर दबाया जाता है या जला दिया जाता है। किसी पितर को जमीन में दबा देना या जला देना कोई पुण्य का काम नहीं हो सकता। परन्तु मृतक शरीर को दबाना या जलाना लोग पुण्य समझते हैं।

वास्तव में नाते और पितर आदि सम्बन्ध इस संसार से ही सम्बन्ध रखते हैं। मरने पर न कोई किसी का पितर हैन कोई किसी की सन्तान है। सब जीव अपना-अपना कर्मफल भोगने के लिए संसार क्षेत्र में आते हैं। शरीर धारण करने पर एक दूसरे से अनेक प्रकार के सम्बन्ध जुड़ जाते हैं। यदि कहीं मरने के पश्चात् भी जीवों के साथ माता-पिता, बहन, भाई आदि के सम्बन्ध बने रहते हैं, तो पुनर्जन्म में माता का पुत्र से, बहन का भाई से, पुत्री का पिता से विवाह होना सम्भव हो जायेगा। इसलिए जीव से माता-पिता आदि का सम्बन्ध नहीं है, जीव और शरीर के संयोग विशेष से सम्बन्ध है। अतः श्राद्ध जीवितों का ही होता है।

राम – वर्ष भर में 15 दिन श्राद्ध के निश्चित हैं कभी किसी पितर का श्राद्ध किया जाता है, कभी किसी का किया जाता है। पितर लोग सूक्ष्म शरीर धारण करके श्राद्ध के दिनों में आते हैं और ब्राह्मणों के साथ ही भोजन करते हैं। यदि कभी पितृ लोक से पितर न भी आ सकें, तो ब्राह्मणों के खिलाया हुआ भोजन उन्हें मिल जाता है।

श्याम – जब मैं बता चुका हूँ पितर नाम आत्मा या शरीर का नहीं है, आत्म और शरीर के विशेष सम्बन्ध का नाम है। फिर यह कहना कि पितर सूक्ष्म शरीर धारण कर भोजन करने आते हैं सरासर हठ और अविवेक का परिचय देना है। अच्छा चलो थोड़ी देर के लिए मान भी लें कि पितर सूक्ष्म शरीर धारण कर आते भी हैं, परन्तु यह तो बताओ बिना स्थूल शरीर के वे भोजन कैसे लेते हैं, क्या सूक्ष्म शरीर से भोजन कर सकना सम्भव है? अब ब्राह्मणों के साथ भोजन करते हैं तो पहले पितर खाते हैं या पहले ब्राह्मण खाते हैं? यदि ब्राह्मण पहले खाते हैं तो पितर झूठा खाते हैं। यदि दोनों मिल कर खाते हैं तो दोनों एक दूसरे का झूठा खाते हैं। झूठा खाना स्वास्थ्य और सिद्धान्त दोनों दृष्टियों से निन्दनीय है।

अच्छा वर्ष भर मे 15 दिन ही क्यों निश्चित हैं? क्या साढ़े ग्यारह महीने उन्हें भूख नहीं लगती? क्या 15 दिन के भोजन से ही वर्ष भर तक तृप्त बने रहते हैं? क्या ऐसा हो सकता है? यदि हो सकता है तो किसी व्यक्ति को

15 दिन खिला कर वर्ष भर तक बिना भोजन के जीवित रहता हुआ दिखाओ। 15 दिन भी कहाँ? श्राद्ध के 15 दिन निश्चित हैं, इसमें भी केवल एक दिन पितरों के परिवार वाले निकालते हैं। दूसरे यदि ब्राह्मणों को खिलाने से मृतक पितरों को भोजन पहुँच जाता है, तो भोजन करने पर ब्राह्मणों का पेट क्यों नहीं भर जाता? ब्राह्मणों को तो भोजन करने पर भी भूखा ही रहना चाहिए। जब भोजन उन्होंने पितरों को पहुँचा दिया तो फिर उन का पेट कहँ भरा? श्राद्ध खाने वाले ब्राह्मणों से जरा यह पूछा लिया करो कि जिन पितरों को भोजन पहुँचाना है, वे हैं कहाँ? साथ, वह रोगी है या तन्दरुस्त है? यदि वह रागी ही हो जो फिर उनको हलुआ, पूड़ी और खीर से क्या प्रयोजन है? उन्हें कड़वी दवा और मूँग की दाल का पानी चाहिए। भारी भोजन से तो वह और अधिक रोगी हो जायेंगे।

जब किसी को यह पता नहीं कि मृत्यु के पश्चात् पितर आत्मा किस योनि में गया है और किस अवस्था में है, तो खीर, पूड़ी ब्राह्मणों द्वारा भेजने का अर्थ ही क्या है? यदि श्राद्ध के दिनों में किसी का पितर किसी योनि से स्वयं ही सूक्ष्म शरीर के भोजन करने आवे भी तो जिस योनि से आयेगा उस की तो मृत्यु हो जानी चाहिये। थोड़ा और विचार करो कि एक आत्मा तत्त्वज्ञान प्राप्त करके मुक्त हो गया, उसे संसार के भोजन की क्या चिन्ता? एक आत्मा कर्म वश शेर या भेड़िया बना हुआ है, दूसरा विष्ठा या नाली का कीड़ा बना हुआ है, इन प्राणियों का हलुआ और पूड़ी से क्या काम चलेगा? प्रत्येक प्राणी का अपना भिन्न-भिन्न प्रकार का स्वादिष्ट भोजन है। सब का व्यक्ति जैसा तो भोजन नहीं होता।

देखो! यदि कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति के पास पत्र डाल रहा हो, परन्तु उसका पता न जानता हो, सारा मजबून लिखकर बिना पते का पत्र लैटरबक्स में छोड़ दें तो या वह उसकी अक़्लमन्दी होगी और क्या वह पत्र उस व्यक्ति के पास पहुँच जायेगा? कदापि नहीं। फिर बिना पता निशान के ब्राह्मणों को खिलाने से पितरों के पास कैसे भोजन पहुँच जाएगा, यह तो कोरा अन्धविश्वास है। एक व्यक्ति को खिलाने से अगर दूसरे व्यक्ति के पास भोजन पहुँच जाता तो परदेश जाने वाले को भोजन बाँध कर ले जाने की

आवश्यकता ही क्या थी। घर पर ब्राह्मणों को खिला दिया जाता परदेश जाने वाले का पेट स्वतः भर जाता है। अतः मृतक पितरों का श्राद्ध करना बिल्कुल व्यर्थ एवं धोखा है।

राम – दोस्त! आपने तर्क द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि मृतक पितरों का श्राद्ध नहीं होता और न एक का दिया दूसरे को मिलता है, परन्तु यह तो बताओ किसी पुत्र का पिता ऋणी होकर मर जाता है। वह ऋण का पाप अपने ऊपर ले गया है। पुत्र थोड़े दिन बाद धनवान् हो जाता है और वह पिता का ऋण चुका देता है। अब बताओ मृतक का आत्मा ऋण रूपी पाप से मुक्त हुआ या नहीं? जब पुत्र ने चुका ही दिया फिर पिता ऋणी रहा ही कहाँ? जब पुत्र द्वारा पिता की आत्मा ऋण के पास से मुक्त हो सकती है तो पुत्र द्वारा ब्राह्मणों को भोजन कराने पर पिता की भोजन सम्बन्धी तृप्ति क्यों नहीं हो सकती?

श्याम – तुम्हें निश्चयपूर्वक जानना चाहिए कि पिता के कर्म का फल पुत्र को और पुत्र के कर्म का फल पिता को कभी नहीं मिलता। व्यक्ति जो भी अच्छे बुरे कर्म करता है, उसके संस्कार सूक्ष्म शरीर पर पड़ते हैं, वही संस्कार उस का सुख-दुःख रूप भोग बनाते हैं और वह भोग बिना भोगे नहीं टल सकता। लौकिक दृष्टि से पुत्र पिता का ऋण चुका देगा, लेकिन ऋण लेने के संस्कार जो पिता की आत्मा पर पड़े हैं, उन्हें पुत्र कैसे मिटा सकेगा? वह तो उसके बस की बात नहीं। किसी भी व्यक्ति के मन पर संस्कार उसी की करनी से पड़ते हैं और उसी की करनी से धुल सकते हैं। उन्हें दूसरा कैसे धो सकता है? पुत्र लेन-देन की दुनियाँ का तो इलाज कर लेगा परन्तु पिता की सूक्ष्म शरीर से सम्बन्ध रखने वाली दुनियाँ का इलाज कैसे कर सकेगा।

यदि यह मान लिया जाये, कि ऋण चुका देने से पिता की आत्मा पर पड़े हुए ऋण के संस्कार भी नष्ट हो जाते हैं तो जो पिता करोड़ों रुपये की सम्पत्ति धर्म से कमा कर मर गया है और धर्म से धन कमाने के संस्कर साथ ले गया है, परन्तु उस का पुत्र अयोग्य निकला, उसने पिता के धर्म से कमाये हए धन को शराबखोरी और दुराचार आदि में उड़ा दिया। इस पाप से उसकी

सर्वत्र निन्दा हो रही है। अब बताओ, उसका फल मृतक पिता की आत्मा को मिलेगा या नहीं? क्योंकि पुत्र ने पिता के धन से ही पाप किया है। यदि पिता के कमाये हुए धन से पाप करने पर पिता की आत्मा को पाप नहीं लग सकता, तो पिता के लिए हुए ऋण को चुकाने से पिता के ऋण से संस्कार कैसे टल जायेंगे? पिता का ऋण तो पुत्र इसलिए चुकाता है कि जहाँ वह देनदार है, वहाँ वह लेनदार भी है। जब पुत्र पिता की सम्पत्ति लेने का अधिकारी है तो देने का अधिकारी कौन होगा? जो लेगा व देगा भी यह तो मानव समाज का एक नियम है, जो चल रहा है।

किन्हीं-किन्हीं देशों में नियम नहीं भी है। योरूप के कई देशों में यह नियम नहीं है। उन देशों में संयुक्त परिवार की प्रथा नहीं है। माता-पिता सन्तान का तब तक पालन करते हैं जब तक उनकी सन्तान स्वतन्त्रता स जीवन व्यतीत करने योग्य नहीं बन जाती। जहाँ योग्य हुई फिर माता-पिता और सन्तान का कोई सम्बन्ध नहीं रहता। न कोई किसी का लेनदार रहता है न कोई किसी का देनदार। वहाँ ऋण चुकाने न चुकाने का कोई प्रश्न ही नहीं है। वहाँ प्रत्येक व्यक्ति अपने ऋण का स्वयं ही उत्तरदायी है। इसलिए यह कहना कि ऋण आदि का पिता की आत्मा पर चढ़ा हुआ पाप पुत्र धो देता है, सर्वथा मिथ्या है। इस सृष्टि में कौन किसका ऋणी है और किस रूप में ऋणी है—इसकी व्यवस्था परमात्मा ही जानता है और वही एक दूसरे का ऋण चुकाने की कर्मानुसार व्यवस्था करता है। सृष्टि के बहुत से काम किसी के लिए साध्य हैं और किसी के लिए साधन हैं। परन्तु यह निश्चित है कि एक के किये हुए कर्म का फल दूसरे को नहीं मिलता।

राम – अच्छा दोस्त! मृतक पितरों को भोजन नहीं मिलता न सही, परन्तु मृतक पितरों के नाम पर भोजन कराने में हानि ही क्या है? इसी बहाने कुछ दान बन जाता है। उनकी यादगार में कुछ न कुछ पुण्य ही हो जाता है।

श्याम – हानि क्या? हानि यह है कि वैदिक सनातन मर्यादा का नाश होता है। यदि कहो, क्यों? इसलिए कि पितृयज्ञ अर्थात् पितरों का सत्कार नित्य कर्म के अन्दर आता है। ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, अतिथि यज्ञ, बलिवैश्वदेव यज्ञ तथा पितृ यज्ञ इन पाँच यज्ञों को यथाशक्ति नित्य ही करना चाहिये। ऐसी

वैदिक शास्त्रों की आज्ञा है। यदि मृतक श्राद्ध की 15 दिन की तिथियाँ निश्चित की जाती हैं और उसका नाम पितृपक्ष रखा जाता है, तो नित्य मर्यादा का खण्डन हो जाता है।

मृतक श्राद्ध तो वर्णाश्रम व्यवस्था के अनुसार भी नहीं हो सकता क्योंकि पुत्र जब ब्रह्मचर्य आश्रम में होगा, तो पिता गृहस्थाश्रम में होगा। इसी प्रकार जब पुत्र गृहस्थाश्रम में होगा तो पिता वानप्रस्थ में होगा। इसी प्रकार जब पुत्र वानप्रस्थ में होगा, तब पिता संन्यास में होगा, और तब पिता की मृत्यु का समय होगा, तब पुत्र संन्यासी होगा। अतः सोचो, संन्यासी कैसे मृतक श्राद्ध कर सकेगा? क्योंकि उसने सारी सकाम भावनाओं का त्याग कर दिया है, तभी तो संन्यासी बना है। संन्यासी से पारिवारिक सम्बन्ध रहता ही नहीं, न वह किसी का पिता रहता है न पुत्र, फिर श्राद्ध कैसा? अपितु संन्यासी तो परिव्राजक होता है। सदुपदेा करते हुए भ्रमण में कब और कहाँ मृत्यु हो गई, इसका भी पिता पुत्र तथा अन्य घर वालों को कैसे लगेगा? अतः किसी प्रकार भी मृतकों का श्राद्ध साबित नहीं होता। रही दान और पुण्य हो जाने की बात सो पितरों अर्थात् बुजुर्गों की यादगार में खिलाना-पिलाना या दान देना बुरा नहीं, यदि पात्र और कुपात्र को देखकर ऐसा किया जाये। परन्तु जो काम बहाने बनाकर किया जाता है, उसकका परिणाम शुभ नहीं निकलता, क्योंकि हृदय में सच्चाई न होने के कारण दान करने वाले की आत्मा पर अच्छा संस्कार नहीं पड़ता। जो मन में हो, वही वाणी पर हो तथा वैसा ही कर्म किया जाये, जब वह पुण्य का काम कहलत है। बहाने से किया दान न दान है, और न पुण्य है।

जो भी काम होना चाहिए, सद्भावना और सच्चाई से होना चाहिए और बिना विचारे दान-पुण्य करना तो संसार में आलसियों और निकम्मे लोगों की संख्या बढ़ाना है और कुछ नहीं। यदि अपने पूर्वजों की यादगार में खिलाना, दान देना आवश्यक है तो क्या आवश्यक है कि क्वार के महीने में ही 15 दिन की निश्चित तिथि में भोजन कराया जाये और दान दिया जाये? और वह भी केवल ब्राह्मणों को ही कराया जाये? क्यों नहीं नंगे भूखे, लंगड़े,

लूले-अपाहिज व्यक्तियों को चाहे वे किसी देश और जाति के हों उन्हें भोजन और दान दिया जाये? पितरों की यादग में तो बात तब ठीक हो सकती है जब उसी तारीख के आने पर उनकी यादगार में कुछ किया जाये। जैसे रामनवमी, कृष्णजन्माष्टमी उसी तारीख में बनाई जाती है जिस तारीख से उनका जन्म हुआ है। इसी प्रकार पितरें की यादगार उसी तारीख से मनाई जाये जिस तारीख में वे मरे हैं तब तो मान लिया जाये कि हाँ यादगार के लिए यह श्रद्धा दिखाई जा रही है, अन्यथा मृतक श्राद्ध ढोंग एवं पाखण्ड है।

8. नमस्ते कहाँ से चली?

है पसन्द अपनी-अपनी नसीब अपना-अपना।
कोई फूल चुनकर लाया कोई खार गुलिस्ताँ से।।

राम – दोस्त! यह नमस्ते कहाँ से चली और इसका अर्थ क्या है?

श्याम – सृष्टि के आदि से लेकर महाभारत पर्यन्त सब व्यक्ति परस्पर में नमस्ते ही करते थे। उसके पश्चात् जब अनेक मत-मतान्तर दुनियाँ में फैले, तो उन सबने अलग-अलग शब्द नियत किये। किसी ने 'गुड मार्निंग', 'गुड नाईट' किसी ने 'अस्लाम अलैकुम' 'वालेकम सलाम' आदि अनेक शब्द विधर्मियों और विदेशियों ने कल्पित कर लिए। हिन्दुओं में भी मत पंथ वालों ने अनेक शब्द कल्पित किये। जैसे जै रामजी की, जै कृष्ण जी की आदि अनेक प्रयोग जारी किये गये। महाभारत के पहिले भू-मण्डल पर आर्य लोगों का अखण्ड राज्य था। लोग वैदिक धर्मी थे परस्पर में नमस्ते ही किया करते थे। अब ऋषि दयानन्द की कृपा से लोग प्राचीन वैदिक सिद्धान्त को पुनः समझने लग गये हैं और परस्पर नमस्ते करने लगे हैं। तुमने जो यह पूछा है कि नमस्ते का क्या अर्थ है, जैसे नमस्ते शब्द का संधिच्छेद करें तो यह बनता है नमः+ते। क्योंकि व्याकरण के निम्नानुसार विसर्ग (:) को स् हो जाता है। नमः का अर्थ है सम्मान और ते का अर्थ है आप के प्रति। अतः नमस्ते का अर्थ हुआ कि मैं आप का सम्मान करता हूँ। वस्तुतः नमस्ते एक सार्वजनिक एवं सार्वभौमिक शब्द है जोकि साम्प्रदायिकता से रहित है और सभी के स्वीकार्य है।

राम – नमस्ते कितने प्रकार से किया जा सकता है?

श्याम – नमस्ते के अभिवादन के अग्रलिखित तीन मुख्य प्रकार हैं–

(1) चरण स्पर्श – गुरु, आचार्य, माता-पिता, वृद्धजनों के दोनों चरणों के दोनों हाथों से स्पर्श करना। यह परम्परा गुरुकुलों में आज भी प्रचलित हें। गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त छात्र यत्र-तत्र-सर्वत्र कहीं पर भी गुरुजनों के दर्शन हो जाने पर चरण स्पर्श करता है।

(2) साष्टांग दण्डवत् प्रणाम – आठ अंगोंसहित मस्तक, हाथ, पैर, छाती, आँख, वचन और मन। इनके सहित भूमि पर लेट कर प्रणाम करना।

गुरु जी को उनके सम्मुख लेटकर प्रणाम करना ।

(3) करबद्ध – घर आए हुए व्यक्ति, अतिथि को हाथ जोड़कर, सिर झुका कर नमस्ते शब्द का उच्चारण करते हुए आगे बढ़कर उन का स्वागत करना और आकर नियत स्थान पर बैठाना । इसके अतिरिक्त मार्ग में किसी मान्य व्यक्ति के मिल जाने पर उनकी आयु के अनुसार दादा जी, चाचा जी आदि कहते हुए पूर्ववत् हाथ जोड़ कर सिर झुका कर नमस्ते बोलना । ऐसा करने वाले व्यक्ति की नम्रता, कोमलता, निष्ठा, सद्भावना प्रकट होती है और मिलने वाले व्यक्ति को प्रसन्नता की प्राप्ति होती है ।

राम – क्या वेदों में नमस्ते करना लिखा है? और जैराम जी की, जै श्रीकृष्ण की करने में हानि ही क्या है?

श्याम – वेदों में ही क्या? वाल्मीकि रामायण, महाभारत, उपनिषद्, गीता आदि सभी ग्रन्थों में नमस्ते ही लिखा हुआ मिलता है । कहीं भी जैरामजी की, जै कृष्ण जी की आदि लिखा हुआ नहीं मिलता । राम और कृष्ण स्वयं नमस्ते करते थे, क्योंकि वे सब वैदिक धर्मी थे । देखो दोस्त ! अगर तुमसे कोई यह पूछे कि राम और कृष्ण से उत्पन्न होने के पहले लोग क्या करते थे तो इसका उत्तर क्या दे सकते हो? राम को उत्पन्न हुए लगभग 955000 वर्ष हुए और कृष्ण को उत्पन्न हुए 5200 वर्ष हुए । सृष्टि तो इससे पहले की है । सृष्टि को उत्पन्न हुए 1,96,08,53,122 वर्ष हुए हैं । मैं तुमसे कह चुका हूँ, यह सब साम्प्रदायिक लोगों की कल्पनायें हैं । तुम्हारा यह कहना कि जै राम जी की, जै कृष्ण जी की कहने में हानि क्या है? हानि एक नहीं अनेक हैं । प्रथम तो लोगों में साम्प्रदायिक भावना जाग्रत होती हैं । दूसरे इन प्रयोगों में परस्पर के सम्मान की कोई भावना नहीं । मानवसमाज में तो कोई आयु किसी से बड़ा है, कोई आयु में छोटा है और कोई आयु में बराबर । जब परस्पर में एक दूसरे से मिलना हो तो एक दूसरे के प्रति आदर का भाव प्रकट करना मानवता और सभ्यता का चिन्ह है । ऐसा न करके जैराम जी की, जै कृष्ण जी की, कहना शोभास्पद प्रतीत नहीं होता । मानलो तुम्हें अपनी नानी, मामी या बुआ, फूफा के दर्शन हुए और उस समय उन सबसे तुमने जयरामजी की या जय कृष्ण जी की कहा, तो ऐसा कहने में तुमने उनके सम्मान में क्या शब्द कहे? क्योंकि जयरामजी की बोलने में रमा की जय और जय कृष्ण जी बोलने

में कृष्ण की जय हुई। उनके आदर और सम्मान में तो कुछ न हुआ। नमस्ते कहने से यह बात निकली कि मैं आपका आदर करता हूँ। आदर हर एक का करना चाहिए छोटों को छोटा जैसा, बड़ों को बड़ों जैसा। बच्चे का भी आदर है, और बड़े का भी आदर है, माता-पिता का भी आदर है, पुत्र-पुत्री का भी आदर है।

राम – राम की जय और कृष्ण की जय बोलने में राम और कृष्ण का नाम तो जीभ पर आता है।

श्याम – नाम तो आता है, परन्तु क्या ये आवश्यक है कि एक दूसरे के सम्मान के समय भी जयराम जी की और जयकृष्ण जी की ही कहा जाये? क्या हर समय हर एक शब्द का बोलना उचित होता है? समय पर राम की और कृष्ण की जय बोलना भी अच्छा प्रतीत हो सकता है। जहाँ राम और कृष्ण का चरित्र वर्णन किया जा रहा हो, वहाँ कंस और रावण के मुकाबले पर राम-कृष्ण की जय बोलना अत्यन्त सुन्दर और शोभायमान प्रतीत होता है।

राम – क्या अच्छे शब्द हर समय नहीं बोले जा सकते है?

श्याम – चाहे कितने ही सुन्दर शब्द हों, वे समय पर ही अच्छे मालूम देते हैं। देखो! राम नाम सत्य है कितना सुन्दर वाक्य है। परन्तु हर समय अच्छा मालूम नहीं देता। यदि हर समय अच्छा मालूम दे तो जरा विवाह के अवसर पर इसे बोलकर देखो फिर पता चले कि यह वाक्य कितना भयंकर है। इस वाक्य के बोलने में कितनी बुराइयाँ पल्ले पड़ती हैं, जरा अजमा कर कभी देखो तो सही। राम नाम सत्य है वाक्य केवल शव को शमशान ले जाते हुए ही बोला जाता है।

राम – क्या प्रत्येक को नमस्ते करना चाहिए? बेटा बाप को नमस्ते करे तो ठीक भी है, परन्तु बाप बेटे को नमस्ते करे, माँ बेटी को नमस्ते करे छोटा बड़े को और बड़ा छोटे को, नीच ऊँच को भला यह क्या बात हुई।

श्याम – अच्छा यह बताओ, कि एक व्यक्ति को अपनी माता से प्रेम करना चाहिए या नहीं?

राम – हाँ करना चाहिए।

श्याम – अपनी बहन से भी प्रेम करना चाहिए या नहीं?

राम – हाँ करना चाहिए ।

श्याम – अपनी पुत्री से भी प्रेम करना चाहिए या नहीं ?

राम – हाँ , करना चाहिए ।

श्याम – अपनी पत्नी से भी करना चाहिए या नहीं ।

राम – हाँ, करना चाहिये ।

श्याम – अब मैं पूछता हूँ, सबसे ही प्रेम करना चाहिये, यह क्या बात हुई ? माता से भी प्रेम, बहन से भी प्रेम, पुत्री से भी प्रेम, पत्नी से भी प्रे, पिता, पुत्र और भाई से भी प्रेम । सबसे प्रेम ही प्रेम ? सबके लिए एक ही शब्द । भला यह कहाँ की सभ्यता है कि प्रत्येक से प्रेम करें ?

राम – पत्नी, पुत्र, माँ, दोस्त, पुत्र, पुत्री आदि से प्रेम करने में भावनाएं तो अलग-अलग हैं ?

श्याम – इसी प्रकार नमस्ते करने की भावनायें अलग-अलग हैं । जैसे माता-पिता से प्रेम करते हैं तो श्रद्धा प्रकट करते हैं, भाई बहन से प्रेम करते हें तो स्नेह प्रकट करते हैं, पत्नी से प्रेम करते समय प्रणय की भावना प्रकट करते हैं । प्रभु से प्रेम करते हैं तो भक्ति प्रकट करते हैं । इसी प्रकार माता-पिता से नमस्ते करते हैं तो आदर प्रकट करते हैं । पुत्र-पुत्री से नमस्ते करते हैं तो आशीर्वाद देते हैं । बराबर वालों से नमस्ते करते हैं तो प्रेम प्रकट करते हैं । बड़ों का आदर, बराबर वालों से प्रेम छोटों पर दया यह सारी भावनायें नमस्ते शब्द में मौजूद हैं । परन्तु इन सारी भावनाओं का उदाहरण एक ही है–प्रत्येक का आदर, जैसे श्रद्धा, स्नेह, प्रणय आदि शब्द प्रेम के ही दूसरे रूप हें । इसी प्रकार आदर, आशीर्वाद, प्रेम आदि भी नमस्ते के दूसरे रूप हैं ।

राम – यदि कोई व्यक्ति जब किसी से मिलता है चाहे नमस्ते कहे या जय राम जी की कहे या जय कृष्ण कहे इसमें क्या अन्तर पड़ता है ।

श्याम – संसार में विभिन्न जातियों का अभिवादन करने का ढंग अलग-अलग है । चाहे कोई भी व्यक्ति अभिवादन का कोई ढंग अपनाता है, इसमें कोई विशष अंतर नहीं पड़ता है । मुख्य बात तो भावना की होती है कि आप जिस व्यक्ति का अभिवादन कर रहे हो आपके हृदय में उसके प्रति कितना सम्मान है । चाहे कोई व्यक्ति अपनी इच्छा से किसी भी ढंग से अपने

मिलने वाले व्यक्ति का अभिवादन करे यह उसकी इच्छा पर आधारित है। परन्तु जैसे संसार के पुस्तकालय में वेद सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है उसी प्रकार नमस्ते भी सर्वश्रेष्ठ एवं वेदानुकूल अभिवादन है। परिणामतः नमस्ते शब्द ठीक एवं प्रामाणिक है और इसी का बोलचाल की भाषा में प्रयोग होना चाहिये। अतः जब हम किसी भी व्यक्ति से मिले हमें चाहिये नमस्ते से ही उसका अभिवादन कीजिए। इसके विषय वेद प्रकाश शास्त्री जी एक कविता अग्रलिखित है–

सदा करो करबद्ध, शेक-हैण्ड करो ना।
हाथ जोड़ कर शीश नवाएं, अर्थ यही नमस्ते का।।
शेक-हैण्ड है बीमारी लाता, करबद्ध नमस्ते रोग भगाता।
नमः है सदा नम्र बनाता 'ते' आप को सुपथ दिखाता।।
आत्मविश्वास बनाए रखो, चरैवेति का त्याग करो ना।
है वेद का आदेश नमस्ते, करने से कभी डरो ना।।

राम – दोस्त आप ने यह शंका तो निवारण कर दी अब यह बतलाइये कि व्यक्ति को माँस खाना चाहिये या नहीं?

श्याम – इस पर फिर चर्चा होगी।

9. माँस खाना चाहिए या नहीं?

राम – क्या व्यक्तियों को माँस खाना चाहिये?

श्याम – नहीं।

राम – क्यों?

श्याम – इसलिए कि मांस बिना प्राणियों को पीड़ा दिए प्राप्त नहीं होता और अपने स्वार्थ के लिए किसी को अकारण पीड़ा देना मानवधर्म नहीं है।

राम – इस दृष्टि से तो किसी को शाक, फल आदि भी न खाना चाहिए, क्योंकि उनमें भी जीव है, उनको भी पीड़ा पहुँचती है। अब वनस्पति में भी जीव है, तो उनको भी दुःख पहुँचेगा ही?

श्याम – तुम्हारा प्रश्न तो यह था मांस खाना चाहिये या नहीं। मैंने उत्तर दे दिया कि नहीं खाना चाहिए। यहाँ प्रश्न यह नहीं है कि वृक्ष और वनस्पतियों में जीव है या नहीं। यदि यही बात हो कि जिसमें जीव होता है उसमें माँस होता है, तो साबित करो कि वृक्षों और शाक फलों में माँस कौन सा है। जिसे न खाना चाहिए। सुनो! फलों और सब्जियों में रस होता है, रक्त और माँस नहीं होता। क्योंकि कोई नहीं कहता, आम का माँस खाओ, संतरे का माँस खाओ। आम का रस लो, 'रस' कहीं से और किसी का लो, चाहे सन्तरे का चाहे गन्ने का। 'रस' सेवन करने में कोई दोष नहीं। दोष तो खून और माँस के खाने में हैं। जहाँ खून और माँस का सम्बन्ध है, वहाँ प्राणी को दुःख होता है। जहाँ रस है वहाँ दुःख का कोई सम्बन्ध नहीं है। किसी भी प्राणधारी का रस निकालने पर उसे कोई दुःख नहीं होता। जैसे गोरस अर्थात् गाय का दूध, उसके निकालने में गाय को क्या दुःख है? यदि गाय के थन गोरस अर्थात् दूध से भर रहे हों और न दुहा जाये तो देखा गया है गाय रंभाने लगती हैं, इसलिए कि दूध दुह लिया जाये। परन्तु जहाँ गाय या किसी जानवर का रक्त माँस निकाला जाता है वहाँ उसे दुःख होता है।

राम – यदि फलों और सब्जियों में मांस नहीं है तो उनमें जो गंदा है, वही तो माँस है?

श्याम – अगर फलों और सब्जियों का गूदा ही मांस है, तब तो हलवाई

के रसगुल्ले और गुलाबजामुन को भी मांस कहा जा सकता हैं क्योंकि गूदा तो उसमें भी होता ही है । परन्तु रसगुल्ले को कौन माँस कहेगा, मांस वस्तुतः वही है, जहाँ रक्त है । जहाँ रक्त नहीं वहाँ मांस कैसा? वृक्षों और फल फूलों में रस है, रक्त नहीं । जब रक्त ही नहीं है तो मांस कहाँ से आयेगा? शरीर की धातुओं में सबसे पहली धातु रस हे रस से रक्त बनना है और रक्त से मांस बनता है और मांस से अन्य धातुयें उत्पन्न होती हैं । आज जो भोजन किया जाएगा, उसका पचकर पहले रस बनेगा । उस रस का फिर रक्त बनेगा ओर फिर मांस बनेगा । मांस तीसरा स्टेज है । जब प्रभु ने प्राणी के शरीर में रस का मांस बना दिया फिर किसी प्राणी के मांस को खाकर रस बनना और फिर मांस बनना सृष्टि क्रम के विरुद्ध भी है ।

राम – तो फिर अण्डे खाने में तो शायद कोई भी दोष न होगा, क्योंकि अण्डे में तो मांस नहीं है, शायद रस ही है?

श्याम – अण्डा रज वीर्य के संयोग का पिण्ड है । उस पिण्ड से ही प्राणी उत्पन्न होते हैं जो रक्त मांस वाले हैं । किसी भी रक्त मांस वाले प्राणी की नींव को नष्ट करना क्या व्यक्ति का धर्म है, सो भी स्वार्थ पूर्ति के लिए? हर्गिज नहीं ।

राम – मैं तो देखता हूँ दुनियाँ के थोड़े लोगों को छोड़कर सब मांस खाते हैं । इससे पता चलता है कि मांस खाना कोई बुराई की बात नहीं । कुछ ऐसा भी पता चलता है, क़ुदरत ने व्यक्ति को मांसाहारी ही बनाया है ।

श्याम – यह कोई युक्ति नहीं है कि जिस काम को अधिक लोग करते हैं वह काम अच्छा ही होता हैं संसार में झूठ बोलने वाले अधिक हैं, सत्य बोलने वाले कम तो क्या झूठ बोलना अच्छी चीज है? दुनियाँ में पापी अधिक, पुण्यात्मा कम हैं, तो क्या पापी अच्छे कहे जायेंगे? संसार में घास फूँस अधिक, फल वाले वृक्ष उससे कम, चन्दन आदि के उससे भी कम । मिडिल वाले अधिक, मैट्रिक वाले उससे कम, बी.ए. वाले उससे भी कम और एम.ए. वाले उससे भी कम । तो क्या एम.ए. पास कम होने के कारण बुरे कहे जायेंगे? संसार में अच्छे और सच्चे लोग बहुत कम होते हैं । बुराई फैलते हुए देर नहीं लगती, भलाई के लिए कोशिशें करनी पड़ती हैं । कपड़े पर मैल बिना

परिश्रम के ही लग जाता है। परन्तु धोने में परिश्रम करना पड़ता है। व्यक्तियों को मांसाहारी प्रभु ने नहीं बनाया, ये आदतें व्यक्तियों ने अपने में डाल ली हैं। क्या संखिया अफीम जैसी चीजें खाने के योग्य हैं? परन्तु व्यक्ति इन चीजों के भी आदी देखे जाते हैं।

राम – इसका क्या सबूत है कि व्यक्ति मांसाहारी नहीं?

श्याम – यह तो व्यक्ति के शरीर की बनावट से ही जाहिर हैं प्रथम तो व्यक्ति के वैसे नाखून और दाँत नहीं है जैसे मांसाहारी प्राणियों के हैं। व्यक्ति मांस को काट छांट कर बनाकर, घी मिर्च और मसाले मिलाकर पकाता है और अपनी जबान और दाँतों के अनुकूल बनाने की चेष्टा करता हैं मांसाहारी प्राणियों के नाखुन अन्य प्राणियां के मारने फाड़ने के अनुकूल हैं और उनकी जबान कच्चे मांस का स्वाद लेने के अनुकूल है, व्यक्ति की नहीं। दूसरे मांसाहारी जितने भी प्राणी हैं उन्हें पसीना नहीं आता; व्यक्ति को पसीना अता है। तीसरे मांसाहारी सारे प्राणी पानी को चप-चप कर पीते हें जबकि व्यक्ति घूंट-घूंट कर पानी पीता है। चौथे मांसाहारी प्राणियों की आँखें गोल होती हैं, परन्तु व्यक्ति की आखें बादाम जैसी चपटी हैं। एक ग्रन्थ में मैंने पढ़ा है, जितने मांसाहारी प्राणी हैं ये सन्तानोत्पादक की क्रिया में परस्पर में जुड़ जाते हैं। बिल्ली, कुत्ता, शेर, भेड़िया आदि सबको ऐसा देखा गया है। ऐसी बहुत सी युक्तियाँ दी जा सकती हैं जिनसे प्रकट है कि व्यक्ति मांसाहारी प्राणियों में नहीं है।

राम – मांसाहारी वीर होते हैं । मांस में बड़ी शक्ति होती है, कुछ लोगों का ऐसा ख्याल है?

श्याम – मांसाहारी अधिकांश बेरहम और खूंखार हो सकते हैं, वीर नहीं। वीरता और चीज है, और बेरहमी और चीज। हाँ, तुम यह कह सकते हो कि मांस खाने वाले लाखों इतिहास में वीर हुए हैं, परन्तु वह मांस का गुण नहीं था और न है। वह असल में शिक्षा और संगीत का गुण हैं मांस खाने से ही वीरता आती हो तो संसार के अधिकाँश लोग माँस खाते हैं सारे के सारे वर ही दिखाई देते। भारत में ईसाई, मुसलमान और हिन्दू सभी मांस खाते हैं, फिर भी तेज और तर्रार और मारकाट का माद्दा जैसा मुसलमानों में है उतना

भारत की अन्य जातियों में नहीं । वीर असल में वह है, जो देश और जाति के हितार्थ निःस्वार्थ भाव से अन्याय का अन्त करने के लिए मैदान में डट जाये, चाहे प्राण ही भले चले जायें, परन्तु पीछे को क़दम कभी न रखें । किसी के घर में आग लगा दी, किसी को लूट लिया, किसी पर धोखे से वार कर दिया, किसी को छुरा घुसेड़ दिया किसी की स्त्री भगा ली कया इसका नाम वीरता है? बहुतेरे गुण्डे इस प्रकार का काम करते देखे जाते हैं, क्या वह वीर है? हर्गिज नहीं । वे पापी और अत्याचारी हैं ।

राम – सुना जाता है मांस खाने से बल आता है । शेर, भेड़िया चीते आदि जानवर कितने बलवान् होते हैं? वे मांस ही खाते हैं । शेर हाथी तक को मार लेता है । इससे पता चलता है मांस में बहुत बल है ।

श्याम – क्या मांस न खाने वाले जानवर बलवान् नहीं हैं? गाय, घोड़ा, सांड आदि जानवर क्या कम बलवान् हैं? संसार भर की मशीनों की शक्ति का परिणाम घोड़ों की शक्ति से ही तो लगाया जाता है । सूअर इतना बलवान् होता है कि सामने पड़ने पर शेर के भी दाँत खट्टे कर देता है । दो शेरों के मध्य में एक सुअर पानी पी सकता है, परन्तु दो सुअरों के मध्य में एक शेर पानी नहीं पी सकता । शेर हाथी से बलवान् नहीं है कभी-कभी जंगली मतवाला हाथी जब जंगल में घूमता है, सारे अन्य पशु डर कर भागते हैं । शेर हाथी पर काबू अपने पैने दाँतों और पंजों से पा लेता है, शक्ति से नहीं । देखो! दो व्यक्ति हों, एक शरीर में बहुत बलवान् हो, दूसरा शरीर में कमजोर । परन्तु कमजोर के पास भाला, बर्छी, पिस्तौल या बन्दूक हो तो वह बलवान् पर काबू पर लेगा और उसे मार भी डालेगा । क्यों? इसलिए कि उसके पास शस्त्र की शक्ति है । यदि कहीं शेर की तरह हाथी पर पैने दाँत और नाखून होते और उसकी आँख छोटी न होती, तो संसार में हाथी किसी प्राणी को न रहने देता । हाथी, ऊँट, भैंस, भैंसा आदि जानवर जो मांस नहीं खाते बड़े बलवान् हैं । वे लाचार यदि हो जाते हैं तो शस्त्रों के अभाव में ही हो जाते हैं ।

तुम बल की बात क्या पूछते हो, बल तो सोना चाँदी लोहा तांबा आदि धातुओं की एक-एक रत्ती में भी मौजूद है वह मनों मांस में नहीं है । वह-वह

औषधियाँ और वनस्पतियाँ मौजूद हैं, जिनकी एक-एक मात्रा में अत्यन्त गर्मी और शक्ति मौजूद है । मांस में क्या शक्ति है ?

राम – जिन देशों में अनाज पैदा नहीं होता वहाँ के व्यक्ति तो मांस पर ही गुजारा करते हैं । आइसलैंड अथवा उत्तरी ध्रुव के प्रदेशों में सुना जाता है मांस के ऊपर ही लोगों का जीवन निर्भर है । उनका तो मांस स्वाभाविक भोजन है ।

श्याम – यदि उन देशों के निवासियों का स्वाभाविक भोजन मांस है तो वे व्यक्ति न होंगे । या होंगे भी तो व्यक्ति की आकृति से भिन्न होंगे । उनके दाँत और नाखून भी मांस को चीरने और फाड़ने के अनुकूल ही होंगे । यदि हमारे जैसे हर वहाँ के नर-नारी हैं तो मांसाहारी कैसे ? क्योंकि हमारे दांत नाखून, मांस खाने योग्य प्रभु ने नहीं बनाया है । हाँ, उन लोगों ने मांस खाने की आदत डाल ली होगी जहाँ व्यक्ति पहुँच सकता है, वहाँ पर हर एक चीज पहुँच सकती है । यदि कहा जाए, वहाँ अनाज उत्पन्न नहीं किया जा सकता और वहाँ की पृथ्वी भी इस योग्य नहीं जो मानव जीवन की आवश्यक वस्तुएँ सम्पादित कर सकें तो वहाँ मानव का बसना ही व्यर्थ है । वस्तुतः मांसाहार की पुष्टि के सम्बन्ध में सब दलीलें थोथी एवं व्यर्थ हैं ।

राम – संसार में आर्थिक प्रश्न भी तो है, जहाँ अनाज कम होता है वहाँ मछली आदि बहुतायत से होती हैं वहाँ के ग़रीब आदमियों का गुजारा मछली आदि जानवरों के मांस से होता है । यदि मांस न मिले तो संसार की आर्थिक समस्या कितनी खराब हो जाये ?

श्याम – संसार के किसी भी देश को देखो, जब भी प्रश्न उठता है, रोटी का प्रश्न उठता है । आज भी सार संसार में रोटी का ही प्रश्न और समस्या है । दाल, शाक, चटनी, मुरब्बे, रायते, कढ़ी और मांस का प्रश्न नहीं है । क्योंकि वह सब चीजें रोटी से लगाकर खाने की हैं जायके और लज्जत की है जबान को खुश करने को हैं । पेट भरने और शक्ति प्रदान करने की नहीं है । रोटी मुख्य है और सब चीजें गौण हैं । शरीर का मुख्य आधार रोटी है

और यही संसार का प्रश्न है । आर्थिक प्रश्न सदैव रोटी से सम्बन्धित है और रहेगा भी ।

राम – अच्छा मांस खाने में विशेष हर्ज क्या है ?

श्याम – मांसाहारी प्रभुभक्त नहीं हो सकता क्योंकि तामसिक भोजन से विचार भी तामसिक ही होंगे सात्विक नहीं । संसार में जो भी प्रभु के सच्चे भक्त बने वे या तो मांस खाते ही नहीं थे, यदि खाते भी थे तो बाद में खाना उन्होंने छोड़ दिया । तब उन्हें अन्तरात्मा की ज्योति का पता चला । यह ठीक है जो मांस नहीं खाते वह प्रभुभक्त नहीं दीखते आडम्बरी दीखते हैं । उन लोगों में भी चोरी, दगा, फरेब, झूठ बोलना आदि दुर्गुण मौजूद हैं । परन्तु जो व्यक्ति पापों से रहित और निरामिष भोजी है वही प्रभुप्राप्ति कर सकता है । अतएव मांस खाना निषिद्ध है ।

राम – अच्छा मित्र यह तो बताओ कि क्या सारी सृष्टि का निर्माण प्रभु ने किया है ?

श्याम – इस विषय पर विचार फिर किया जायेगा ।

10. क्या सारी सृष्टि का निर्माण प्रभु ने किया है?

राम – क्या यह सारा संसार प्रभु की ही रूप है?

श्याम – नहीं, यह संसार प्रकृति का रूप है। प्रभु रूप से रहित है।

राम – बड़े-बड़े बुद्धिमान और दार्शनिक विद्वान् यही कहते हैं कि सारा संसार प्रभु से ही बना है। प्रभु से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथ्वी और पृथ्वी से अन्न, औषधियाँ तथा अनेक प्रकार के प्राणी उत्पन्न हुए हैं।

श्याम – यह बात गलत है, प्रभु सृष्टि का उत्पत्तिकर्त्ता है स्वयं कार्य नहीं है। सृष्टि उत्पत्ति के तीन कारण हैं और तीनों ही पदार्थ अनादि हैं। परमात्मा, आत्मा और प्रकृति ये तीनों पदार्थ अनादि हैं। प्रभु निमित्त कारण है, प्रकृति उपादान कारण है और काल, दिशा आदि साधारण कारण। क्योंकि सृष्टि कार्यों में यह सामान्य है। निमित्त कारण वह है जिसके बनाने में कोई चीज़ बने न बनाने से न बने। उपादान कारण वह है जिसके होने से कोई चीज बने, न होने से न बने। जैसे सुनार ने आभूषण बनाया। अब सुनार इसमें कर्त्ता अर्थात् निमित्त कारण हुआ और सोना उपादान कारण हुआ। सुनार के बनाने से आभूषण बने, न बनाने से न बनते। इसी तरह सोने के होने से आभूषण बने न होने से न बनते।

देखो! यदि प्रभु से आकाश बनता तो आकाश का शब्द गुण है। प्रभु का गुण शब्द है नहीं, तो आकाश में शब्द कहाँ से आया, कारण के गुण कार्य में अवश्य आते हैं। सोने से आभूषण बनाये तो सोने के गुण आभूषण में अवश्य आयेंगे। जब प्रभु में ही शब्द नहीं है, आकाश में कहाँ से आ जायेगा? अभाव से भाव भी नहीं होता। अतः एव सिद्ध है कि प्रभु से आकाश नहीं बना। इसी प्रकार आकाश से वायु नहीं बनी। क्योंकि वायु का धर्म स्पर्श है और आकाश में स्पर्श नहीं है तो स्पर्श गुण वायु में कहाँ से आ गया? वायु से

अग्नि नहीं बनी, क्योंकि अग्नि का गुण रूप है और रूप वायु में है नहीं। फिर अग्नि में रूप कहाँ से आ गया? इस प्रकार सारे तत्त्वों को समझ लो। यह सब तत्त्व सत, रज, तम वाली मूल प्रकृति से ही बने हैं और इन्हें निमित्त कारण परमात्मा ने ही बनाया।

राम – प्रभु सृष्टि बनाने में जब प्रकृति का सहारा लेता है, तो प्रकृति का मुहताज हुआ क्योंकि वह बिना प्रकृति के संसार नहीं बना सकता?

श्याम – प्रभु प्रकृति का सहारा नहीं लेता अपितु प्रकृति को ही संसार के रूप में बिना किसी का सहारा लिए कर देता है। अपना कार्य करने में किसी साधन का मुहताज नहीं है। प्रकृति साधन नहीं बल्कि कर्म है जिस पर परमात्मा की क्रिया का फल गिरता है। जैसे राम ने श्याम को मारा, तो श्याम कर्त्ता है, राम कर्म है और मारना क्रिया है। कोई कहने लगे कि राम श्याम को मारने में सोहन का मुहताज है। मैं पूछता हूँ, यह कहना अक़्लमंदी की बात है क्या? क्या बिना राम के श्याम को मार देना कहना ठीक बन भी सकता था? यदि मैं कहूँ मैंने कृष्ण को पाँच रुपये दिये हैं तो कोई मुझसे कहने लगे, तुम कृष्ण को रुपये देने में रुपयों के मुहताज हो। भला यह क्या बात हुई? रुपये देने में रुपये का मुहताज कैसा? शायद तुम्हारा मतलब यही है, कि मरने वाला न हो और प्रभु उसे मार दे। खाने वाला न हो और प्रभु उसे खिला दे, रोने वाला न हो और प्रभु रुलादे। प्रकृति न हो और प्राकृतिक जगत् बना दे। भला इसे पागलपन के अतिरिक्त और क्या कहा जायेगा?

राम – मैं तो सुनता हूँ, सृष्टि बनने से पूर्व प्रभु ही प्रभु था और कोई पदार्थ नहीं था। उसने अपनी इच्छा से सृष्टि बनाई है।

श्याम – प्रभु ने सृष्टि क्यों बनाई? अपने लिये या अन्य के लिये? यदि कहो, अपने लिए तो मालूम हुआ, सृष्टि की आवश्यकता प्रभु को थी। जिसमें जरूरत है उसे पूर्ण नहीं कहा जा सकता है। क्योंकि जरूरत का होना ही अपूर्ण होने का सबूत है। यदि कहो जीवों के लिए बनाई तो प्रभु के साथ

जीव भी मानने पड़ेंगे । फिर प्रभु ही प्रभु था यह बात गलत हो जायेगी ।

राम – क्या उसने अपनी लीला दिखाने के लिए सृष्टि को रचा है ?

श्याम – उसने अपनी लीला किसको दिखाई ?

राम – स्वयं को, अपनी लीला दिखाता है ।

श्याम – स्वयं को अपनी लीला क्यों दिखाता है ?

राम – अपने आनन्द के लिए दिखाता है ।

श्याम – तो सृष्टि रूप लीला दिखाने के पहले उसमें वह आनन्द था या नहीं । यदि था, तो लीला दिखाने से आनन्द क्या हुआ ? यदि नहीं था तो उसमें लीला के आनन्द की कमी तो स्वतः ही सिद्ध हो गई और जब लीला दिखाई तो सृष्टि रूप लीला के आनन्द की प्रभु में वृद्धि हुई । जिसमें कमी और वृद्धि का दोष होता है, उस पदार्थ के गुण अनादि अनन्त नहीं होते और जब गुण ही अनादि अनन्त नहीं हैं तो उनका गुणी जो प्रभु है, अनादि अनन्त कैसे हो सकता है ।

राम – अच्छा, मैं यह मान लूं कि लीला दिखाना उसका स्वभाव है ।

श्याम – ऐसे मानने में राग, द्वेष, क्षुधा, तुषा, भय, शोक, सुख, दुःख, जन्म, मरण, अन्याय, चोरी, जारी, हिंसा, व्यभिचार आदि गुण, अवगुण सब प्रभुलीला के ही धर्म मानने पड़ेंगे, क्योंकि सृष्टि रूपी लीला में यह सारी बातें हैं । फिर संसार में पाप, पुण्य, दुराचार, सदाचार, धर्म, अधर्म कोई पदार्थ न रहेगा । सब परमात्मा के स्वभाव के अंग बन जायेंगे । फिर तो वेद शास्त्र, यम, नियम आदि साधन सब व्यर्थ हो जायेंगे । मानव जीवन का उद्देश्य भी कोई न रहेगा । किसकी प्राप्ति के लिए त्याग और तपस्यायें की जायें और कौन उन्हें करें, जब कि प्रभु स्वयं को अपने स्वभाव से ही लीला दिखाई है । फिर कौन पपी और कौन पुण्यात्मा ? कौनसा कर्म और कौनसा कर्मफल । सब व्यर्थ ।

राम – अच्छा आप के सिद्धान्त से प्रभु ने सृष्टि क्यों बनाई ?

श्याम – जीवों के कल्याण के लिए प्रभु सृष्टि की रचना किया करता

है। वह न्यायी और दयालु है। उसके न्याय और दया का प्रकाशन सृष्टि-उत्पत्ति द्वारा ही होता है। उसका अपना कोई प्रयोजन नहीं, दया और न्याय करना उसका स्वभाव है।

राम – जब प्रभु ने जीवों के कल्याण के लिए सृष्टि बनाई है, तो उसमें दुःख-सुख और भलाई-बुराई क्यों है?

श्याम –सृष्टि में जो भी भलाई बुराई प्रतीत होती है और सुख-दुःख मालूम देता है वह वास्तव में जीवों के अपने कर्मों का परिणाम है। जीव अपनी अज्ञानतावश सृष्टि में दुःख उठाता है। अन्यथा न सृष्टि में कोई बुराई है और न कोई दुःख है। जीव अपनी अल्पज्ञता के कारण विपरीत कर्म करके दुःख उठाते हैं, और प्रभु के न्यायानुसार अनेक योनियाँ धारण करते हैं, प्रभु दुःख किसी को नहीं देता। दुःख का कारण अज्ञान है, वास्तविकता का न समझना है।

राम – क्या जीव प्रभु ने नहीं बनाये?

श्याम – जीव अनादि हैं।

राम – जब जीव और प्रकृति प्रभु ने नहीं बनाये तो उसने इन पर अधिकार क्यों किया?

श्याम –यह प्रश्न ऐसा ही है, जैसे कोई स्कूल में विद्यार्थियों को देखकर कहे जब अध्यापक ने इन विद्यार्थियों को पैदा नहीं किया तो इन पर अपना अधिकार क्यों रखता है? जब प्रकृति अज्ञ, जीव अल्पज्ञ और प्रभु सर्वज्ञ है तो दोनों वस्तुओं पर सर्वज्ञ का प्रभाव स्वभाव से रहेगा। जैसे विद्यार्थियों की उन्नति का कारण है वैसे ही सृष्टि रूप में जीवों का ईश्वराधीन रहना जीवों की उन्नति का कारण है। प्रभु रूपी अध्यापक के वेद ज्ञान द्वारा जीव लौकिक और पारलौकिक उन्नति सम्पादित करते हैं।

राम – यदि यह मान लें कि जीवों को भी प्रभु न बनाया है, तो क्या आपत्ति आती है।

श्याम –ऐसा मानने पर जीव कर्म करने में स्वतन्त्र न रहेगा। दूसरे भले बुरे कर्मों की जिम्मेदारी प्रभु पर ही रहेगी। जीव पाप का भागी न माना जायेगा, क्योंकि जीव को प्रभु ने बनाया और भले बुरे कर्म करने की उसमें योग्यता रखी, तभी भले बुरे कर्म किये तो उसका अपना दोष क्या हुआ? जीव को बनाने के पहले उसमें यह योग्यता रखता कि बुरे कर्म वह कर ही न सकता। अतः जीव अनादि है, और कर्म करने में स्वतन्त्र है और प्रभु की व्यवस्था से कर्मफल भोगने में परतन्त्र है।

राम – कुछ लोग कहते हैं, जीव ब्रह्म का ही अंश है?

श्याम – अंश, अंशी का भाव सावयव अर्थात् साकार अनित्य पदार्थों में होता है। जीव ब्रह्म दोनों अनादि हैं।

राम – कुछ कहते हैं, जीव ब्रह्म से ही बना है और अन्त में ब्रह्म में लय हो जायेगा?

श्याम – ऐसा मानने पर जीव अनादि और सनातन नहीं रहता। सदा कार्य कारण में लय हो जाता है। जीव ब्रह्म का कार्य नहीं है। वह स्वतन्त्र और नित्य है। जो नित्य है वह अपनी सत्ता खोकर किसी में लय कैसे हो जायेगा?

राम – जीव है तो ब्रह्म ही, अपने को अज्ञानता से जीव समझता है?

श्याम – इससे तो यह सिद्ध होता है, कि ब्रह्म में भी अज्ञान है। जब ब्रह्म हो अज्ञानता के वश जीव बना है तो जीव फिर ज्ञान किससे प्राप्त करेगा? ब्रह्म से तो कर नहीं सकता, क्योंकि ब्रह्म तो अज्ञान के काबू में आया है।

राम – क्या ब्रह्म से जीव नहीं बना? और क्या अन्त में जीव ब्रह्म न बनेगा?

श्याम – जो बनता है, वह ब्रह्म नहीं होता, ब्रह्म तो वे बनी वस्तु है इसी

तरह जीव भी ही बनता । तभी तो दोनों तत्त्व नित्य हैं ।

राम – कुछ लोग कहते हैं, यह संसार मिथ्या है, ब्रह्म ही सत्य है, माया को अनिर्वचनीय कहते हैं । क्योंकि माया तीन काल में एक रस रहती नहीं, इसलिए सत् उसे कह नहीं सकते । असत् इसलिए नहीं कहते कि उस का संसार में काम दिखाई देता है ।

श्याम – संसार न सत् है न असत् बल्कि अनित्य है, अर्थात् बदलने वाला है जो लोग माया को अनिर्वचनीय कहते हैं उनसे पूछना चाहिये कि माया को किसी प्रमाण से मानते हो या बिना प्रमाण के ही मानते हो । यदि प्रमाण से मानते हो तब तो माया प्रमेय हो गई क्योंकि प्रमाता ने प्रमेय से जान लिया, उसका निर्वचन हो गया । यदि कहो बिना प्रमाण के मानते हैं, तो माया है वह जाना कैसे? इसलिए माया अर्थात् प्रकृति के कार्य अनित्य हैं और प्रकृति नित्य है ।

राम – कुछ विचार है, यह संसार भ्रम है, वास्तव में इसकी सत्ता नहीं है, जैसे रस्सी का साँप दिखाई देता है, सीप की चाँदी दिखाई देती है, इसी प्रकार ब्रह्म में माया की प्रतीति होती है । वास्तव में माया नहीं है । सीप में चाँदी नहीं, रस्सी में साँप नहीं, तो भी भ्रम हो जाता है, इसी प्रकार ब्रह्म में ही माया का भ्रम हो रहा है ।

श्याम – यह भ्रम हो किसे रहा है, जब ब्रह्म के सिवाय और कोई चीज ही नहीं । क्या ब्रह्म में ब्रह्म को ही ब्रह्म का भ्रम हो रहा है । क्योंकि भ्रम किसी में किसी का किसी को होता है । दूसरे भ्रम समान वस्तुओं में होता है । जैसे रस्सी में साँप का भ्रम हो सकता है, घड़े में नहीं, सीप में चाँदी का भ्रम हो सकता है गुलाब जामुन का नहीं । जब ब्रह्म चैतन्य जगत् जड़ तो असमान होने से भ्रम कैसे होगा । ब्रह्म निराकार जगत् साकार, ब्रह्म नित्य जगत् अनित्य, ब्रह्म सर्वज्ञ जगत् अज्ञ, फिर भ्रम होगा कैसे?

राम –क्या ब्रह्म के अतिरिक्त और वस्तुएं भी हो सकती हैं ।

श्याम – यदि और न वस्तुएं हों तो ब्रह कहा किसे जाये । ब्रह्म का अर्थ

है बड़ा, जब छोटा ही नहीं तो बड़ा कैसा। जब कड़वा ही नहीं तो मोटा कैसा दूसरे ब्रह्म आत्मा है जिसका अर्थ है व्यापक। यदि व्याप्य न हो तो व्यापक होगा कैसे।

राम – अच्छा दोस्त! इस विषय को अब यहीं समाप्त करता हूँ। आप की युक्तियों से ही यही समझ में आता है कि परमात्मा, आत्मा और प्रकृति के नित्य मानने में ही सारी समस्याएं हल हो जाती हैं। और कोई वाद इस सृष्टि का सम्यक् समाधान नहीं कर सकता। क्योंकि यह त्रैतावाद का सिद्धान्त वेदानुकूल है। अतः यही सत्य है।

लेखक द्वारा प्रकाशित एवं निःशुल्क वितरित पुस्तकों की सूची :–

1. रामचरितमानससार
2. गीतासार
3. उपनिषद्सार
4. सत्यार्थप्रकाशसार
5. भक्ति
6. सुखीजीवन
7. आत्मबोध
8. वेदवाणी
9. वैदिकसाहित्य
10. अमृतवाणी
11. महर्षि दयानंद
12. स्वामी विवेकानंद
13. शरणागति
14. वैदिक रामायण
15. क्या आप जानते हैं ?
16. शेंर-ओ-शायरी
17. ओ३म्
18. गायत्री रहस्य
19. अमर धर्मग्रंथ
20. सुखी कौन?
21. वेदसार
22.

लेखक द्वारा अप्रकाशित पुस्तकों की सूची :–

1. अमर नीतिग्रंथ
2. पुराणपरिचय
3. ईश्वरसिद्धि
4. राष्ट्रभाषा हिन्दी
5. संस्कार
6. गीतांजलि
7. आर्यसमाज
8. ज्ञानामृत
9. यज्ञ
10. संत
11. संतवाणी
12. भतृहरिशतक
13. ब्रह्मचर्य
14. गृहस्थ
15. धर्म
16. कर्म
17. मन
18. भारत के क्रांतिकारी
19. भारत के भक्त
20. प्रभुभक्ति
21. ज्ञानगंगा
22. पाँच शत्रु
23. सच्ची वाणी
24. मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम
25. महावीर हनुमान
26. योगिराज श्रीकृष्ण
27. आदिशंकराचार्य
28. आचार्य चाणक्य
29. स्वामी रामतीर्थ
30. दस गुरु
31. आर्यसमाज के महामानव
32. आत्मकथा
33. वैदिक मनुस्मृति
34. वैदिक उपनिषद्वाणी
35. वैदिक दर्शनवाणी
36. वैदिक महाभारत
37. वैदिक गीता
38. **General English (Part I to V) (For All Classes)**
39. **Great Thoughts**
40. **Great Indians**
41. **Great Thinkers**
42. **Great Scientists**
43. सामान्य हिन्दी (भाग I-II) (सब कक्षाओं के लिये)
44. 1000 हिन्दी साहित्य प्रश्नोत्तरी
45. हिन्दी साहित्य का इतिहास
46. भाषा विज्ञान
47. आलोचना
48. साधना
49. मानषपीयूष
50. गीतापीयूष

कृपया पाठकगण इस ओर भी ध्यान दें कि इनकी निम्नलिखित पुस्तकों को इनकी Website : www.dpkapoorbooks.co.in पर भी देखा जा सकता है ।

1. अमृतवाणी
2. आर्यसमाज
3. अमर नीतिग्रंथ
4. अमर धर्मग्रंथ
5. ईश्वरसिद्धि
6. गायत्रीरहस्य
7. ज्ञानामृत
8. गीतांजलि
9. क्या आप जानते हैं ?
10. ओ३म्
11. पुराणपरिचय
12. राष्ट्रभाषा हिन्दी
13. संस्कार
14. संत
15. संतवाणी
16. शरणागति
17. शेर-ओ-शायरी
18. यज्ञ
19. भर्तृहरिशतक
20. ब्रह्मचर्य
21. गृहस्थ
22. धर्म
23. कर्म
24. मन
25. सुखी कौन ?
26. भारत के क्रांतिकारी
27. भारत के भक्त
28. प्रभुभक्ति
29. वेदसार
30. ज्ञानगंगा
31. पाँच शत्रु
32. सच्ची वाणी
33. मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम
34. महावीर हनुमान
35. योगिराज श्रीकृष्ण
36. आदिशंकराचार्य
37. आचार्य चाणक्य
38. महर्षि दयानंद
39. स्वामी विवेकानंद
40. स्वामी रामतीर्थ
41. दस गुरु
42. आर्यसमाज के महामानव
43. आत्मकथा
44. वैदिक साहित्य
45. वैदिक मनुस्मृति
46. वैदिक उपनिषद्वाणी

(जारी...)

47. वैदिक दर्शनवाणी
48. वैदिक रामायण
49. वैदिक महाभारत
50. वैदिक गीता
51. संस्कृतरहस्य
52. साधना
53. मानसपीयूष
54. गीतापीयूष
55. दादा पोते की बातें
56. दादी पोती की बातें
57. दो दोस्तों की बातें
58. **Great Thoughts**
59. **Great Indians**
60. **Great Thinkers**
61. **Great Scientists**
62. **General English**
    (Part I to V)
    (For All Classes)
63. सामान्य हिन्दी (भाग **I-II**)
    (सब कक्षाओं के लिये)
64. 1000 हिन्दी साहित्य प्रश्नोत्तरी
    (सब प्रकार की प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए)
65. हिन्दी साहित्य का इतिहास
    (पंजाब विश्वविद्यालय की एम.ए. हिन्दी की कक्षा के लिए)
66. भाषा विज्ञान
    (पंजाब विश्वविद्यालय की एम.ए. हिन्दी की कक्षा के लिए)
67. आलोचना
    (पंजाब विश्वविद्यालय की एम.ए. हिन्दी की कक्षा के लिए)